महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ५९ **अंक** : २२

दयानन्दाब्द: १९३

विक्रम संवत्: मार्गशीर्ष कृष्ण २०७४

कलि संवत्: ५११८

सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११८

सम्पादक

डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

परोपकारी का शुल्क

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु.
त्रिवार्षिक-५८० रु.
आजीवन (१५ वर्ष)-२००० रु.
एक प्रति - १५/- रु.

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर
द्विवार्षिक-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर
त्रिवार्षिक-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर
आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.
एक प्रति - ३ पाउण्ड
एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

नवम्बर द्वितीय २०१७

अनुक्रम

०१. वर्णव्यवस्था,लोकतन्त्र और वंशवाद	सम्पादकीय	०४
०२. युञ्जान: प्रथमं मन:	डॉ. धर्मवीर	०७
०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	०९
०४. वैदिक ऋषियों का मन्त्रों से संबन्ध	पं. उदयवीर शास्त्री	१२
०५. शुभास्ते सन्तु पन्थान:	तपेन्द्र वेदालङ्कार	१६
०६. शङ्का - समाधान - १३	डॉ. वेदपाल	१९
०७. वैदिक पुस्तकालय के नये संस्करण		२१
०८. चमत्कारों का पोल खाता	इन्द्रजित् देव	२२
०९. पति-पत्नी का आपसी...	शिवनारायण उपाध्याय	२८
१०. मूर्तिपूजा का मतलब है.....	जगदीश प्रसाद शर्मा	३२
११. पुस्तक परिचय	सोमेश पाठक	३६
१२. संस्था-समाचार		३९
१३. आर्यजगत् के समाचार		४२

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com
- **उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ** -
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

सम्पादकीय

वर्णव्यवस्था, लोकतन्त्र और वंशवाद

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वेदों के आधार पर गुण, कर्म और स्वभाव के अनुसार समाज-व्यवस्था का विवेचन किया है। उन्होंने आर्यसमाज की स्थापना लोकतांत्रिक व्यवस्था के आधार पर की थी न कि वंश-परम्परा के आधार पर। उन्होंने इसीलिए सर्वत्र लोकतांत्रिक निर्वाचन प्रक्रिया को भी स्वीकार किया। भारत में 19वीं शताब्दी का यह एकमात्र ऐसा आंदोलन था जिसमें व्यवस्थाएं लोकतांत्रिक प्रक्रिया के आधार पर सुनिश्चित की गईं थीं। अंग्रेजों और राजशाही के काल में भी महर्षि ने लोकतांत्रिक व्यवस्था का महत्त्व समझा था और इसीलिए आर्यसमाज के सभी अंगों में उन्होंने इस व्यवस्था को लागू किया-कराया। यही नहीं, अपनी उत्तराधिकारिणी-श्रीमती परोपकारिणी सभा में भी उन्होंने इसी पद्धति को अंगीकृत किया, जिससे सारे कार्य सुचारु रूप से चल सकें। सभी लोग व्यक्तिगत रूप से श्रेष्ठ गुणों के निष्पादन के लिए प्रयत्न करें, परन्तु सामूहिक रूप से व्यक्ति को लोकतांत्रिक पद्धति से ही चलना होगा; ऐसा महर्षि का विश्वास था। सत्यार्थ प्रकाश के राजधर्म-सम्बन्धी षष्ठ समुल्लास में भी हमें इसी पद्धति के दर्शन होते हैं, जहाँ महर्षि किसी एक को स्वतंत्र रूप से (राज्य का) अधिकार देने का निषेध करते हैं।

21वीं सदी में बहुत आश्चर्य की बात है कि भारत की एक प्रमुख राष्ट्रीय पार्टी के उपाध्यक्ष अमेरिका में भारत में वंशवादी परम्परा के समर्थक होने का दावा करते हैं और बड़े गर्व से इसे पुष्ट करने के लिए प्रमाण भी देते हैं। इसे दुर्भाग्य ही कहा जाएगा कि जहाँ विश्वभर में निरन्तर लोकतांत्रिक व्यवस्थाएं समृद्ध हो रही हैं वहीं भारत में वंशवादी परम्परा की स्थापना की बात की जा रही है। वंशवादी व्यवस्थाओं को समाज ने हमेशा नकारा है। जीवन के प्रत्येक पक्ष में देखा और विचार किया जाए तो यह कहना उचित नहीं होगा कि पिता-पितामह के अधिकार या योग्यताएँ सन्तान को बिना योग्यता के ही प्राप्त हो जाती हैं, हो भी जाएँ, तो स्थायी नहीं होतीं। जरूरी नहीं कि पिता यदि डॉक्टर है तो उसका पुत्र भी डॉक्टर ही बने और यदि किसान का बेटा आई.ए.एस. बनना चाहे तो क्या वंशवादी परम्परा में उसे केवल किसान ही बनना चाहिए? क्या उसे स्वयं के लिए अन्य कोई व्यवसाय चुनने या डॉक्टर, इंजीनियर अथवा आई.ए.एस. के पद के लिए चयनित नहीं होना चाहिए? भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस सबसे प्राचीन पुरातन राजनीतिक दल है जिसका गठन 1885 में हुआ और आज वह इस मोड़ पर खड़ी है कि इस पार्टी के अधिकारियों को वंशवाद की वकालत करनी पड़ रही है और उनके समर्थक आँखें मूँद कर 21वीं सदी में भी इसके पोषक बन रहे हैं। यह इस देश की लोकतांत्रिक और संवैधानिक पद्धति का मजाक उड़ाने जैसा है। आश्चर्य है कि अभी कुछ पीढ़ियों पहले जिनके पूर्वजों ने वंशवाद का समर्थन करने वाले राजाओं-नवाबों और जमींदारों की जन्मना व्यवस्था का विरोध करके सत्ता हस्तगत की थी और लोकतांत्रिक व्यवस्था की वकालत की थी, उन्हीं के उत्तराधिकारी वंशवाद की वकालत कर रहे हैं। यह तो अयोग्यता को प्रतिष्ठित और सम्मानित करने जैसा है। वास्तव में व्यक्ति जब अयोग्य और असमर्थ होता है, तो वंशवाद, जातिवाद इत्यादि की दुहाई देकर अधिकार हस्तगत करना चाहता है।

महर्षि इस संबम्ध में इतने सतर्क थे कि वे समष्टि-रूप में देशवासियों में कला-कौशल का गुण-आधान करके शासक अंग्रेज-वर्ग के बराबर खड़ा करना चाहते थे। इसीलिए महर्षि ने जर्मनी के **तकनीकी प्रशिक्षण विद्यालय के प्रो. जी. वाईज को** 1880 में पत्र लिखकर भारतीय युवाओं को बढ़ईगिरी, स्टेनोग्राफी, घड़ीसाज और लोहे का काम इत्यादि का प्रशिक्षण देने के लिए पत्र लिखा था और इस कार्य को लोकतांत्रिक प्रक्रिया के रूप में स्वीकार करते हुए उन्होंने लाला मूलराज की समिति को उक्त विषय में विचार-विमर्श करके प्रस्ताव देने को कहा था। लेकिन, क्योंकि लाला मूलराज अंग्रेजों के एजेण्ट थे इसलिए उन्होंने उक्त प्रस्ताव को आर्यसमाज में पारित नहीं होने दिया। लेकिन महर्षि ने समिति के प्रस्ताव को स्वीकार किया, क्योंकि उनमें लोकतांत्रिक प्रक्रिया के आधार पर विचार करने का मंतव्य था। महर्षि ने इसीलिए पदे-पदे विचार-विमर्श के बाद निर्णय लिए जाने के विचार दिए हैं। उन्होंने वेद और मनुस्मृति का आधार लिया था और जन्मगत जाति-व्यवस्था को स्वीकार नहीं किया इसीलिए वे वंशवादी व्यवस्था के स्थान पर कर्मणा व्यवस्था को स्वीकार करते थे, क्योंकि वेद के अनुसार मानव-मात्र को वेद पढ़ने (ज्ञान प्राप्त करने) का अधिकार है और गुण, कर्म, स्वभावानुसार

अपने जीवन का लक्ष्य निर्धारित करने का भी अधिकार है न कि वंशानुगत अयोग्य व्यक्तियों को भी केवल वंश के कारण ही पद व अधिकार दे दिया जाना। यही कारण था कि आर्यसमाज में वेद के मूर्धन्य विद्वानों ने जन्मगत ब्राह्मणवादी परम्परा को स्वीकार न कर योग्यता के आधार पर सर्वश्रेष्ठ वैदिक सिद्धान्तों को जीवन में धारण किया और तदनुरूप ग्रन्थों का प्रणयन किया। यह महर्षि और तदनुयायी आर्यसमाज की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है कि जन्मना ब्राह्मणों के साथ-साथ कर्मणा ब्राह्मणों ने वैदिक साहित्य और समाज की सेवा की है। जन्मना भी जो थे, वे कर्म (विद्वत्ता) के आधार पर ही आर्यसमाज में सम्मानित हो सके।

महर्षि का सिद्धान्त है- **जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात् द्विज उच्यते।**

सत्यार्थ प्रकाश के चतुर्थ समुल्लास में स्वामी जी ने लिखा है- **''यह गुण कर्मों से वर्णों की व्यवस्था कन्याओं के सोलहवें वर्ष तथा पुरुषों की पच्चीसवें वर्ष की परीक्षा में नियत करनी चाहिये।''** स्नातक अथवा स्नातिका हो जाने पर वर्ण का निश्चय और घोषणा आचार्य करता है।

भारत के राजनीतिक परिदृश्य पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने मोतीलाल नेहरू, जवाहर लाल नेहरू, इन्दिरा गांधी, राजीव गांधी और फिर सोनिया गांधी और अब राहुल गांधी की ताजपोशी की वंश-परम्परा को सम्पूर्ण भारत पर लाद कर अपना बचाव किया और उसे अमिताभ बच्चन और अन्यान्यों के उदाहरण से पुष्ट करने के हेत्वाभासी तर्क दिए जिन्हें कदापि स्वीकार नहीं किया जा सकता। यह कुनबापरस्ती भारत के अन्य उन दलों में भी है जिन दलों का समर्थन यह पार्टी अपने पक्ष में करने की चेष्टा करती है। भारतीय सामयिक राजनीतिक चर्चा में कांग्रेस अपने अध्यक्ष को वंशवादी परम्परा के स्वरूप में स्थापित करने का प्रयास कर रही है, जबकि आज कांग्रेस भारतीय राजनीति में कहाँ खड़ी है, यह स्वयं स्पष्ट है। कांग्रेस का राजनीति में सिमटना और उसका वंशवाद को मिथ्या तर्कों से पुष्ट करने का प्रयास करना; यह भारत की विपरीतगामी सोच का द्योतक है। आश्चर्य है कि यह विमर्श आज बुद्धिजीवियों के समक्ष तिरोहित हो गया प्रतीत होता है। हमारे तथाकथित बुद्धिजीवी, जो आज नीतिगत पदों पर पहले से आसीन हैं उनकी बोलती इस ऐतिहासिक, सामाजिक महत्त्वपूर्ण मुद्दे पर धृतराष्ट्र की सभा की तरह मौन हैं। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की दुहाई देने वाले और किसानों, मजदूरों के हितों के एकमात्र संरक्षक होने का दावा करने वाले साम्यवादी विचारक क्या आज राहुल जी के प्रतिगामी विचारों के समर्थक सिद्ध नहीं हो रहे? क्या यही प्रगतिशील भारत की छवि है कि हम कैर्लिफोर्निया में यह कहें कि भारत में वंशवादी परम्परा ही जीवित है? यदि कहीं है भी, तो कांग्रेस के पुरातन इतिहास के आधार पर उसका उच्छेद ही करना कांग्रेस को उचित है।

मध्यकालीन सामाजिक व्यवस्था को भारत की स्वतंत्रता के बाद भी जीवित रखने का प्रयास जिन-जिन विचारधाराओं और वंशों ने किया है वे अब हमारे सामने कहाँ हैं? हमारा मानना है कि गुण, कर्म और स्वभाव ही किसी व्यक्ति की योग्यता का प्रमुख मापदण्ड बनता है और हमारे समक्ष वर्तमान में भारत के राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री दोनों ही वंशवादी परम्परा से आज पदासीन नहीं हुए हैं, अपितु उनके अहर्निश प्रयत्न और गुण, कर्म, स्वभाव ने उन्हें यहां तक पहुँचाया है। आज भारत का शीर्ष नेतृत्व स्वयं ही इस तथ्य का साक्षी है कि वंशवाद से किसी भी समाज का विकास नहीं किया जा सकता। जब राष्ट्रीय दल ही वंशवादी परम्परा को उत्तरोत्तर मजबूत करते जा रहे हैं तब एक आम भारतीय नागरिक, किसान या मजदूर तो कभी अपनी आर्थिक, सामाजिक उन्नति की कल्पना ही नहीं कर सकता। निरन्तर शास्त्रानुशीलन और निष्पक्ष दृष्टि से इतिहास का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि ईश्वरीय न्याय और व्यवस्था एक सहज प्रवाह है। इसको समझकर इसका अनुसरण करना प्रत्येक आस्तिक व्यक्ति का कर्त्तव्य है। यदि अविवेक, स्वार्थ और आलस्य के कारण हम इनका पालन नहीं करते, तो व्यक्ति, राष्ट्र और समाज को इसका दुष्परिणाम भोगने को तैयार रहना चाहिए। इस संचार-क्रांति के युग में यदि कोई विपरीत या न्यायविरुद्ध विचार अंकुरित होता है, तो उसके प्रसारित होने या पुष्ट होने में देर नहीं लगती, अतः उसका त्वरित प्रतिकार आवश्यक है। कर्मणा वर्णव्यवस्था लोकतंत्र और उसकी श्रेष्ठता का मूल है, इसी के कारण एक स्वतंत्र और लोकतांत्रिक वातावरण में प्रत्येक निम्न से निम्न स्थान पर बैठा हुआ व्यक्ति अपनी श्रेष्ठता और गुणातिरेक से राष्ट्र में कोई भी उच्च पद या अवस्थिति को प्राप्त कर सकता है। अतः इस वैदिक सिद्धान्त और व्यवहार की रक्षा आवश्यक है, अन्यथा मध्यकालीन भारतीय इतिहास के अन्ध न्यायों को

हमें बारम्बार याद करना पड़ेगा।

महर्षि ने कहा है कि ''राजा और राजसभा के सभासद **तब हो सकते हैं** कि जब चारों वेदों की कर्म-उपासना-ज्ञान-विद्याओं के जानने वालों से तीनों विद्याएँ, सनातन '**दण्डनीति**', 'न्यायविद्या', '**आत्मविद्या**', अर्थात् परमात्मा के गुण-कर्म-स्वभाव-स्वरूप को यथावत् जानने रूप '**ब्रह्मविद्या**' ..... सीखकर सभासद् वा सभापति हो सकें।''

वेद-नि:सृत यही परम्परा वर्तमान लोकतांत्रिक पद्धति का भी आधार है, जिसमें व्यक्ति को अपने गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार किसी भी प्रकार का व्यवसाय चुनने, किसी भी पद के लिए चयनित होने और सार्वजनिक क्षेत्र में लोकसेवा के कार्य करते हुए सर्वोच्च पद-राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री बनने का अधिकार है। यही प्राकृत व्यवस्था है, जिसके न मानने पर भी समय प्रवाह के साथ यह लागू हो ही जाती है।

अव्रतानाममन्त्राणां जातिमात्रोपजीविनाम्।
सहस्रशः समेतानां परिषत्त्वं न विद्यते।। मनु.

व्रतविहीन वेदशास्त्र के ज्ञान से रहित और किसी विषय पर सम्यक् रूप से विचार करने में असमर्थ और **जातिमात्र (की उच्चता) से स्वयं को बड़ा समझने वाले** हजारों मनुष्यों की भीड़ से भी परिषद्=सभा का निर्माण नहीं हो सकता।

दिनेश

सांख्य दर्शन का अध्यापन

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा के द्वारा 'महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल' ऋषि उद्यान, अजमेर में वर्षों से संस्कृत व्याकरण और दर्शनों का अध्यापन कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। इसी क्रम में 'महर्षि कपिल मुनि' विरचित 'सांख्य दर्शन' का अध्यापन स्वामी विष्वङ् परिव्राजक जी द्वारा ०१ जनवरी २०१८ से विधिवत् रूप से अध्यापन कराया जायेगा। यह दर्शन ६ महीने में सम्पूर्ण हो जावेगा।

इस काल में ऋषि उद्यान में प्रतिदिन यज्ञोपरान्त उपदेश व प्रवचन का लाभ भी प्राप्त हो सकेगा। समय-समय पर विविध विषयों पर विद्वानों द्वारा कक्षाएँ भी होती रहेंगी। ब्रह्मचारियों हेतु निवास और भोजन व्यवस्था नि:शुल्क है। अन्य शिक्षार्थियों के लिये निम्नलिखित नियम लागू होंगे-

१. पढ़ने के इच्छुक लोग अपना पंजीकरण सुनिश्चित कर लेवें। २. पृथक् आवास हेतु प्रति व्यक्ति २,०००/-दो हजार रुपये प्रतिमास अग्रिम जमा कराना आवश्यक है। ३. भोजन, प्रातराश इत्यादि के लिये प्रति व्यक्ति प्रतिमास ३,०००/-तीन हजार रुपये देय होंगे। ४. सामूहिक रूप से आवास के लिये कोई शुल्क नहीं लगेगा और पुरुषों तथा महिलाओं के लिये अलग-अलग दीर्घ कक्ष में व्यवस्था होगी। ५. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को सत्र में प्रवेश नहीं दिया जायेगा। ६. किसी भी मादक द्रव्य, चाय-कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा। ७. शिक्षार्थियों को आश्रम के साफ-सफाई एवं रखरखाव में योगदान करना अपेक्षित होगा। ८. नियम व अनुशासन का पालन करना सभी को अनिवार्य होगा। ९. अकेली महिला हो, तो अवस्था ५० या ५० से अधिक होनी चाहिए। १०. प्रत्येक व्यक्ति को यज्ञशाला में आयोजित सत्संग एवं देवयज्ञ में दोनों समय आना अत्यावश्यक है।

नोट:- अपना पंजीकरण फोन से करा सकते हैं एवं अग्रिम राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु नीचे लिखे बैंक में जमा करा सकते हैं।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**
बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**
IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने,
जयपुर रोड, अजमेर। बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**
IFSC-IBKL0000091

सम्पर्क सूत्र- स्वामी विष्वङ् - ९४१४००३७५६
सम्पर्क समय - ०९.००-१०.०० प्रात:
१२.३०-०१.३० मध्याह्न

युञ्जानः प्रथमं मनः

प्रवचनकर्त्ता - डॉ. धर्मवीर
लेखिका - सुयशा आर्य

हम जब भी सिद्धान्त की बात करते हैं, उनमें उदाहरण प्रायः दूसरे शास्त्रों से देते हैं, वेद से कम देते हैं या हमारी जानकारी में कम रहते हैं। मेरा विचार इन दिनों में उन वेद मन्त्रों से कुछ सम्पर्क कराने का, उनके बारे में विचार करने का है जो उपासना से संबन्ध रखते हैं। जैसे मैंने एक मन्त्र प्रस्तुत किया था-**उपत्वाग्ने दिवे दिवे दोषावस्तर्धिया वयम्। नमो भरन्त एमसि। ऋ. १.१.७** अर्थात् एक मनुष्य को उपासना कैसे करनी चाहिए? कब करनी चाहिए? कितनी करनी चाहिए? बड़ी सहज, बड़ी सरल, बड़े स्पष्ट शब्दों में इसमें बतायी गयी है। प्रभु हम तेरे पास आ रहे हैं, प्रतिदिन आ रहे हैं, दोनों समय आ रहे हैं, नम्रतापूर्वक आ रहे हैं, बुद्धिपूर्वक आ रहे हैं। आज जो मैंने मन्त्र पढ़ा, यह भी यजुर्वेद का मन्त्र है-**युञ्जानः प्रथमं मनस्तत्त्वाय सविताधियम् । अग्नेर्ज्योतिर्निचाय्य पृथिव्या अध्याभरत्।। यजु. ११.१** यह मन्त्र हो सकता है आपके लिए अपरिचित हो। हम जब उपासना की बात करते हैं तो यह समझ में नहीं आता कि यह कैसे हो और कहाँ से हो? तो इसका सबसे आसान प्रकार यह है कि उपासना तो सारे ही करते हैं, चाहे वो ईसाई हों, मुसलमान हों, या बौद्ध हों या कोई और मत सम्प्रदाय के हों या हमारे पौराणिक भाई हों। क्योंकि जितने आस्तिक हैं, जितने ईश्वर को स्वीकार करने वाले हैं, वो उससे संबन्ध बनाने का, उससे निकटता प्राप्त करने का प्रयत्न तो करते ही हैं। जो लोग उपासना करते हैं, अधिकांश में वो शरीर को ही काम में लेते हैं- उसको खिलाते हैं, नहलाते हैं, उसको धुलाते हैं, उसको सुलाते हैं, उसके सामने नाचते हैं, उसके सामने गाते हैं। जो बाह्य व्यवहार है वो बहुत करते हैं क्योंकि उनकी उपासना में पहली चीज़ है बाह्य व्यवहार। वो ऐसा इसलिए करते हैं-वो यह समझते हैं कि कोई व्यक्ति, कोई अच्छा व्यक्ति, जिसको हम अच्छा समझते हैं, सम्मानित समझते हैं, कोई अपना अच्छा अतिथि समझते हैं तो उसे प्रसन्न करने का उपाय करते हैं। आप किसी को भी प्रसन्न करते हैं तो उसको अच्छा सा खिलाते हैं वह प्रसन्न हो जाता है। उसको अच्छी सी भेंट देते हैं, वह प्रसन्न हो जाता है। उसकी सेवा करते हैं तो वह प्रसन्न हो जाता है इसलिये हमको ऐसा लगता है कि जब मनुष्य को प्रसन्न करने के ये उपाय हैं तो भगवान को प्रसन्न करने के भी यही उपाय होंगे और क्या हो सकते हैं? इसलिये वही सब करने लग जाते हैं। उसको खिलाते हैं, पिलाते हैं, कपड़े पहनाते हैं। हम समझते हैं कि आदमी सोने (स्वर्ण) से खुश हो जाता है, सोना पाकर उसको लगता है कि उसने बहुत पा लिया, इसलिये भगवान भी सोने से प्रसन्न होते हैं। आप किलो में, मनों में, क्विंटलों में सोना भगवान को चढ़ाते हैं। तो क्या भगवान प्रसन्न हो जाता होगा। ऐसा नहीं है। तो जिस-जिस सामान्य बात से एक मनुष्य प्रसन्न होगा, तृप्त होगा, तो मैं भगवान के साथ ऐसा करूँगा तो वो भी तृप्त हो जाएगा।

मन्त्र कहता है- **युञ्जानः प्रथमं मनः।** उसने यह नहीं कहा कि हाथ से, पैर से, सिर से, उसे प्रसन्न किया जाए, क्योंकि यदि वह शरीरधारी होता, तो ऐसा करना बुरा नहीं था, स्वाभाविक था और वह प्रसन्न भी हो जाता, किन्तु जैसे एक मनुष्य भोजन करके प्रसन्न होता है, उस तरह भगवान को तो कोई प्रसन्नता दिखाई नहीं देती, आपने उसको अच्छा खिलाया, या आपने उसे बुरा खिलाया, उसने तो कोई प्रतिक्रिया ही नहीं व्यक्त की। यहीं एक वैशाली नगर का छोटा सा मन्दिर था, मैं सामने से निकल रहा था, एक पुजारी जी एक बहिन जी से कह रहे थे- बहिन जी! बालगोपाल को खीर खाए कई दिन हो गए। मैं रुका, मैंने पुजारी जी से पूछा- पुजारी जी! यह बात बालगोपाल ने आपको कही या सपने में आयी। उसने मुझे देखा, हो सकता है परिचित हो, बोला- पण्डित जी! आप जाओ, यह आपका काम नहीं। यह आपके मतलब की बात ही नहीं है। यह हमारे-इनके बीच की बात है।

अब कहीं आपने भी तो नहीं मान लिया है कि भगवान् खिलाने से प्रसन्न होता है? क्योंकि मनुष्य प्रसन्न होता है, तो

भगवान भी प्रसन्न हो जाएगा। किन्तु जब हम उपासना की बात करते हैं, तो पहले भगवान देख तो लो कौन सा है? खैर! उसकी चर्चा का तो इस समय विषय नहीं है। लेकिन मन्त्र में एक बात कही है- **युञ्जानः प्रथमं मनः।** उपासना होगी तो कैसे होगी, कहाँ से शुरु करेंगे? तो मन्त्र कहता है- **मनः**, मन से शुरु करेंगे। अब मन करता क्या है? मन तो विचार करता है, सोचता है, इसलिये इसका अभिप्राय हुआ कि उपासना विचार से प्रारम्भ होती है। अब सोचने में खीर, पूरी, हलवा, कपड़ा तो आएगा नहीं। उपासना ऐसा शब्द नहीं है जो केवल ईश्वर के साथ लगता हो। आप उपासक तो किसी के भी हो सकते हैं, किसी भी प्रिय वस्तु को आप उपासना की कोटि में ला सकते हैं। स्वामी सत्यप्रकाश जी यहाँ आ रहे थे, तो कहने लगे- कहाँ ठहरायेगा? उस समय तो यहाँ इतने मकान नहीं थे। मैंने कहा- जहाँ आप कहो, वहाँ ठहरा दूँगा। बोले- अरे तुझे पता है, मैं शौचालय का उपासक हूँ? कहने का अभिप्राय क्या है कि उसके बिना मेरी गति नहीं है। इसलिये उपासना तो आप किसी की भी कर सकते हो। उपासना वो परिस्थिति है, जो आपके लिए अनिवार्य हो गई है और आप उसके बिना रह नहीं सकते। तो क्या परमेश्वर हमारे लिए अनिवार्य हो गया है? अनिवार्य तो नहीं हुआ। हमको तो ऐसा लगता है, अभी तो बहुत सारे काम करने हैं, संध्या तो उसके बाद करेंगे, जब खाली हो जायेंगे तब करेंगे। तो यह अनिवार्य तो नहीं होता। अनिवार्य तो वो होता है, जब सारे काम छोड़कर आप उस काम के लिए जायें। एक बच्चा गिर गया, चोट लग गई, आपके हाथ में कुछ भी होगा आप उसे छोड़कर तुरन्त भागते हैं और उसको बचाते हैं, चिकित्सालय लेकर जाते हैं। एक व्यक्ति ने बड़ा विचित्र प्रश्न किया, बोले जी हम उपासना कर रहे हैं और कोई बच्चा जैसे आग में जल गया तो उपासना छोड़नी चाहिए? मैंने कहा यह तो महामूर्खता का प्रश्न है। मैंने कहा- लाख उपासना छोड़कर बच्चे को बचाना है। उस उपासना का लाभ क्या हुआ, यदि आदमी डूब रहा है और डूबने दिया जाए कि मैं तो संध्या कर रहा हूँ, इसलिए उठ नहीं सकता।

हाँ, उपासना में एक विचित्र बात हो सकती है कि सब कुछ जल गया हो और उपासक को ध्यान ही न आए। उसे पता ही नहीं लगा कि कोई जल गया, कोई दुर्घटना घटी, उस उपासना में तो कोई अपराध नहीं है। लेकिन यह क्या उपासना हुई कि मैं संध्या में बैठा हूँ, इसलिए उठूँगा नहीं। प्राथमिकता तो आपको निश्चित करनी पड़ेगी। भगवान यह थोड़े ही कहेगा कि तू गलत कर रहा है। यह भी तो भगवान की उपासना ही है, यदि किसी पीड़ित को बचा रहा है- किसी को रोग से, दुःख से, शोक से बचा रहा है तो वह ईश्वरीय काम ही कर रहा है? और उपासना के बारे में आपसे कभी विस्तार से चर्चा करूँगा कि उपासना केवल आँख बंद करके ही होती हो, ऐसा नहीं है। उपासना हर परिस्थिति की है। उपासना चलते-फिरते की है, उपासना बातचीत करते की है, उपासना पढ़ते-लिखते की है, उपासना भाषण सुनते-करते की है। उपासना विचार करते की है। जो भी बात विचार से सम्बन्धित है, वो विचार परमेश्वर से सम्बन्धित हो, बस इतनी सी शर्त है। आप कर क्या रहे हैं, यह महत्त्वपूर्ण नहीं, आप जिस भी विचार को, चाहे कह रहे हैं, चाहे सुन रहे हैं, चाहे पढ़ रहे हैं, चाहे किसी को बता रहे हैं, कुछ भी कर रहे हैं, लेकिन उसका केन्द्र क्या है? उसकी विषय वस्तु क्या है? यदि उसकी **विषय वस्तु ईश्वर है, तो वो सारे काम उपासना है।** आप यह सोचो कि बैठूँगा, वो उपासना का अन्तिम चरण है और अन्तिम चरण हर समय नहीं होता। संसार में जितने काम हम करते हैं, शरीर के लिए बहुत सारे काम हैं और पूरे दिन करते हैं, लेकिन एक समय में एक काम करते हैं। जब हम उपासना का काम करेंगे, तो वेद कहता है कि मन से करें। मन से जब किसी की भी उपासना करते हैं, तब क्या करते हैं? कोई व्यक्ति मान लो प्रिय लगता है, जैसे गुरुकुलों में बच्चे जब छोटे-छोटे प्रविष्ट कराये जाते थे, वो रोते रहते थे। तो यह क्या है भाई, क्यूँ रो रहा है? बोला माँ की याद आ रही है। अब वो मन से क्या कर रहा है?- माँ का स्मरण कर रहा है। वो माँ का उपासक है। वो माँ की उपासना कर रहा है। मन से जब कोई उपासना करेगा तो उसके बारे में सोचेगा। इसलिये आपकी उपासना का प्रारम्भ तब होता है, जब आप मन से ईश्वर के बारे में सोचते हैं। लेकिन समस्या यह है, जब आप सोचते हैं तो शरीर काम नहीं

शेष भाग पृष्ठ संख्या ३७ पर.....

कुछ तड़प-कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

महर्षि महिमा-उनकी महानता- महर्षि दयानन्द जी के जीवन चरित्र तो कई लिखे जा चुके हैं। आर्य जन में सब नहीं फिर भी कुछ तो ऋषि जीवन का स्वाध्याय करते ही हैं। आर्यसमाज के पत्रों में लिखने वाले ऋषि जीवन पर भी लेख देते रहते हैं। वक्ता, विद्वान् तथा भजनोपदेशक ऋषि जीवन के प्रसंग भी सुनाते रहते हैं, परन्तु आज ऋषि जीवन पर लिखने बोलने वाले घिसी-पिटी शैली में बहुचर्चित आठ-दस प्रसंग ही सुनाते हैं। घटना लिखने सुनाने वाले इतिहास की प्रामाणिकता को रौंद कर जैसे उनको जँचे अपनी बात उगल देते हैं।

एक समय था जब पं. चमूपति जी के मुख से ऋषि जीवन की चर्चा सुनकर श्रोताओं के नयन सजल हो जाया करते थे। पण्डित जी के नयनों से अश्रुधारा बहने लगती थी। स्वामी वेदानन्द जी, स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के मुख से ऋषि जीवन की सुनी कथायें हमें आज भी याद हैं। मेहता जैमिनी के ऋषि जीवन पर सुने व्याख्यानों को हम इस जन्म में तो भूल नहीं पावेंगे।

आर्यो! आओ ऋषि जीवन पर चिन्तन मनन करके अपने व्याख्यानों लेखों की शैली को विकसित करके प्रभावशाली बनावें। कैसे?

यहाँ इसके कुछ उदाहरण देते हैं। कहीं एक वक्ता पूना की 'गर्दभानन्द यात्रा' पर बोल रहे थे। बहुत कुछ कहा। यदि वह अपने व्याख्यान में कुछ शब्द और जोड़कर यह कह देते कि उस यात्रा में 'गर्दभ यात्रा मण्डल' ने ऋषि और भक्तों पर ईंट, पत्थर, कीचड़ तो जी भर फेंका, परन्तु गड़बड़ समाप्त होने पर जब ऋषि का प्रभावशाली व्याख्यान हुआ तो ऋषि ने 'गर्दभ यात्रा मण्डली' की करतूत पर एक भी शब्द नहीं बोला।

ऐसी सहनशीलता, महानता महर्षि दयानन्द की कोटि का ही कोई ऋषि मुनि दिखा सकता है। ऐसे एक दो वाक्य लिखने बोलने से ऋषि जीवन की अमिट और गहरी छाप पड़ती है, परन्तु रटे-रटाये, भाषण देने वाले हृदय से तो बोलते नहीं।

चाँदापुर शास्त्रार्थ पर भी कभी-कभी कुछ महानुभाव लिखते बोलते देखे सुने गये, परन्तु उसी शास्त्रार्थ में पादरी स्कॉट ने इंग्लैण्ड के एक दुष्ट दुराचारी बलवान् व्यक्ति जो ईसाई बन गया था उसकी ऋषि दयानन्द से उपमा दे दी। ऋषि जी ने अपने समय में बोलते हुये ऐसे निकृष्ट रहे व्यक्ति की ऋषि से तुलना करने या उपमा देने पर कुछ भी न कहा। समाप्ति पर बस इतना ही कहा-न जाने पादरी स्कॉट के मुख से ऐसे शब्द कैसे निकल गये। उनके लिये यह उचित नहीं था। ऋषि की इस उदारता और सौजन्य पर हममें से कितने लिखते बोलते हैं? यही तो ऋषि की विलक्षणता है जिसको हम मुखरित नहीं करते।

पादरी मौलवी बिना पूर्व सूचना के चाँदापुर से पीठ दिखाकर भाग निकले। इसका मूल्याङ्कन राधा स्वामी गुरु श्री हजूर जी महाराज ने तो किया, परन्तु हमारे कितने लेखकों ने हिन्दू जाति के इतिहास की अपने ढंग की इस पहली घटना को कभी ऐसे उजागर किया है?

पादरी कुक ने सारे सुपठित हिन्दुओं को ललकारा और भारत के शीघ्र ईसाई बन जाने की घोषणा कर दी। तब उसके सामने कोई बोला नहीं। ऋषि ने उसे शास्त्रार्थ की चुनौती दे डाली। पत्र लिखा। सभा में उसके विचारों का प्रतिवाद किया। लेखनी व वाणी का धनी वह गोरा पादरी पूना भाग गया ओर वहाँ से सात समुद्र पार चला गया। महर्षि की इस अपूर्व विजय की हम न जाने क्यों चर्चा नहीं करते। **इतिहास में यह ऐसी पहली घटना है जब देश भर में धूम मचाने वाला एक पादरी ऋषि की हुँकार सुनकर भयभीत होकर भागा।** ऐसी विलक्षण घटनाओं को चिह्नित करके मुखरित करने से विशेष लाभ होगा।

महर्षि के बलिदान विषयक- हमें प्रेरित किया गया कि जोधपुर के लेखक के ऋषि को विष दिये जाने विषयक भ्रामक लेख पर अभी और लिखिये। उस लेखक ने आर्यों पर झूठ बोलने का दोष लगाकर ऋषि को विष नहीं दिया गया इसके लिये कई कुतर्क देकर राजपरिवार को महिमामण्डित किया है। उसे क्या इतना पता है कि श्री

जेठमल सोढा ने जोधपुर दरबार में महर्षि के जीवन पर एक लम्बी कविता सुनाकर उस युग में एक सौ रुपये पुरस्कार प्राप्त किया था? **उस कविता में स्पष्ट लिखा है कि महर्षि के रोम-रोम में विष व्याप्त हो गया।** जोधपुर दरबार ने इसे सुनकर विष दिये जाने की घटना की पुष्टि की या नहीं? पुरस्कृत करके कवि का सम्मान किया। इतने लम्बे समय के पश्चात् इस राजभक्त की नींद खुली है। **अंग्रेजी राज की प्रशंसा के पुल बाँधने वाले बरतानवी नबी ने महर्षि को हलाक किये जाना लिखा है। तब किसी राजभक्त ने मिर्जा गुलाम अहमद पर मानहानि का अभियोग क्यों न चलाया?**

राव राजा तेजसिंह राजकुल का ही रत्न था। उसने स्वामी श्रद्धानन्दजी को पत्र लिखकर महर्षि को विष दिये जाने की घटना स्वीकार की है। वह पत्र इस राजदरबारी ने नहीं देखा पढ़ा तो हम दिखा सकते हैं।

हैदराबाद के मुक्ति संग्राम की स्वर्णिम घटना- हैदराबाद के मुक्ति संग्राम और आर्यों के बलिदानों पर हमारा एक खोजपूर्ण ग्रन्थ शीघ्र तैयार हो जावेगा। हमने आर्यसमाज के विरोधियों तथा आर्यसमाज की उपेक्षा करने वालों के कई ग्रन्थों, लेखों व कविताओं के उसमें नये-नये प्रमाण देकर अनेक महत्त्वपूर्ण घटनाओं तथा तथ्यों को खोद-खोदकर निकाला और मुखरित किया है।

हैदराबाद की पददलित पीड़ित प्रजा की माँगों को एक ऐतिहासिक राजनीतिक सम्मेलन में प्रस्ताव के रूप में उठाने वाला पहला निर्भीक आर्यसमाजी महर्षि दयानन्द का एक तप:पूत और आर्यसमाज का जाना पहचाना परखा योद्धा था। यह घटना हम कभी मुखरित न कर पाये। पर वह नाहर कौन था? पाठक उसका नाम मेरे ग्रन्थ में ही पढ़ेंगे। अभी उसे नहीं बताया जायेगा। पाठक तथा इतिहास प्रेमी कुछ मास तक प्रतिक्षा करें।

स्वामी श्रद्धानन्द जी की निडरता और महानता- हमारे श्री राहुल आर्य जी ने विदेश से एक दस्तावेज खोज निकाला है। उससे पहली बार हमें पता चला कि पं. लेखराम जी के बलिदान पर एक हिन्दू सम्पादक को बहुत गन्दी भाषा में मृत्यु की धमकी देने वाला पत्र भेजा गया था। उसमें और भी कई आर्य नेताओं को हत्या करने की धमकी दी गई। कुत्ता और सूअर, काफ़िर तो लिखा ही गया। जिन्हें मारे जाने की धमकी दी गई **उनमें महात्मा मुंशीराम जी का भी नाम था।**

इस धमकी वाले पत्र की चर्चा तब कई अंग्रेजी पत्रों में भी छपी थी। आश्चर्य होता है कि पूज्य महात्मा मुंशीराम जी ने तब अपने 'सद्धर्म प्रचारक' तथा 'आर्य मुसाफिर' मासिक में इस गन्दे घृणित पत्र पर कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। पं. लेखराम जी के जीवन-चरित्र में भी इस पर एक भी शब्द नहीं लिखा। अपने बलिदान होने तक इसकी ओर संकेत तक नहीं किया। वीर धीर और मृत्युञ्जय संन्यासी श्रद्धानन्द की शूरता का हम किन शब्दों में वर्णन करें। **यति, योगी, मुनि, महात्मा हो तो ऐसा।**

डरेंगे न पिस्तौल के वार से हम।
न पीछे हटें धर्म-प्रचार से हम।।

पत्र-व्यवहार को पढ़ते हो क्या? आर्यो! ऋषि का पत्र-व्यवहार छपता ही रहता है। क्या आपने महर्षि के पत्र व्यवहार की इस विलक्षणता को कभी मुखरित किया है कि आधुनिक भारत के इतिहास में केवल एक ही सुधारक, विचारक और नेता के क्रान्तिकारियों के नाम पत्र मिलते हैं और क्रान्तिकारियों के ऋषि के नाम लिखे गये छपे पत्र मिलते हैं और कोई दूसरा ऐसा महापुरुष हुआ ही नहीं।

सन् १८५७ की क्रान्ति के पश्चात् इस देश में गदर पर लेख व पुस्तकें लिखने की होड़-सी लग गई। क्रान्तिकारियों की निन्दा करने में कोई नेता पीछे न रहा। किसी भी क्रान्तिकारी का नाम मुँह पर लाना मौत को निमन्त्रण देने जैसी बात थी। महर्षि दयानन्द ही एकमेव ऐसा महापुरुष था जिसने राव युधिष्ठिर सिंह को पत्र लिखते हुये उनके क्रान्तिकारी पिता वीर सेनानी राव तुलाराम के नाम का भी उल्लेख किया है। परोपकारिणी सभा द्वारा दो खण्डों में प्रकाशित महर्षि के पत्र-व्यवहार के पहले खण्ड के पृष्ठ ३१७ पर पाठक यह पत्र देख सकते हैं। क्या इस अनूठे पत्र का मूल्याङ्कन कोई करेगा?

कितना अन्धकार था!- एक बार हैदराबाद के कुछ पौराणिक हिन्दुओं ने एक हिन्दू महासम्मेलन या परिषद् आयोजित की। यह बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक की घटना है। इसमें शोलापुर, पूना, मुम्बई आदि दूरस्थ नगरों

से भी कई प्रतिनिधि आये। दलितोद्धार पर जब प्रस्ताव लाया गया तो शास्त्रियों व पण्डितों ने हुल्लड़ मचाया। जी भर कर विरोध किया। एक सुयोग्य सज्जन ने एक हृदय स्पर्शी भाषण देकर सबको रुला दिया। प्रस्ताव पारित हो गया। न जाने दलित हितैषी कांग्रेसी तथा अन्य हिन्दुत्ववादी पार्टियाँ तब कहाँ थीं। आर्यसमाज के सेवकों ने दलितोद्धार के लिये यातनायें सहीं, जानें वार दीं, परन्तु आर्यसमाज के उत्सवों व सम्मेलनों में दलितोद्धार के लिये पारित किये गये किसी प्रस्ताव पर भारत भर में कभी गड़बड़ करने का किसी को भी साहस न हुआ। हैदराबाद में भी ग्राम-ग्राम में आर्यसमाज ने दलित-कल्याण के लिये सब करणीय कार्य किये और उन्हें समाज से जोड़ा। आर्यसमाज के उपकारों की कोई राजनीतिक पार्टी चर्चा करने की शालीनता नहीं दिखाती।

काशी विश्वविद्यालय का कुलपति क्या बोला?- गत दिनों बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में जो गड़बड़ मची उस पर तो हम क्या लिखें? सब कुछ देशवासियों के सामने है। उसके उपकुलपति को कई बार सुना। हमें पता चल गया कि वह किस संगठन का, पार्टी का सेवक है। उसने एक वक्तव्य में कहा, यह विश्वविद्यालय मालवीय जी का मन्दिर है। ऐसी रट लगाने की क्या आवश्यकता थी? मन्दिर-मन्दिर कहकर संस्था का गुण कीर्तन करके उसे पुण्यस्थली बताने से क्या होगा? मालवीय जी के ही सामने कल्याणी देवी को M.A. Theology में जब प्रवेश मिल गया तो काशी के ब्राह्मणों ने एक कन्या का प्रवेश निरस्त करवा दिया। केवल इसलिये कि पाठ्यक्रम में वेद भी थे तथा वेद पढ़ने का किसी अबला को अधिकार नहीं। केवल ब्राह्मण पुरुष ही वेद सुन सकता है और पढ़ सकता है। तब आर्यसमाज के आन्दोलन के आगे इस विश्वविद्यालय को झुकना पड़ा। मान्य मालवीय जी ने तो चुप्पी ही न तोड़ी।

उस समय के उपकुलपति डॉ. राधाकृष्णन् ने कुछ समय पश्चात् अपनी पुस्तक Religion and Society में स्त्रियों के वेदाध्ययन के अधिकार के आर्य सिद्धान्त की पुष्टि कर दी। रामलीला वाली मण्डली ने अगले वर्ष से इस विषय में किसी भी कन्या के प्रवेश से बचने के लिये सब नियम ही बदल दिये। इस मन्दिर के इस ऐतिहासिक पाप को उपकुलपति छिपाते क्यों हैं?

काशी हिन्दु विश्वविद्यालय से आज तक कितनी विदुषी स्त्रियों को वेद में Ph.D. करवाया गया? काशी में ऐसी एक ही आर्यसामाजिक संस्था है जिसमें कभी प्रधानमन्त्री ने पैर नहीं रखा। भोले बाबा और गंगा माता अन्धकार का संहार करने के लिये कुछ कर पाने में विफल रहे हैं और विफल रहेंगे। वे जड़ हैं। क्या कर सकते हैं?

इतिहास बोल रहा है- **'इतिहास बोल पड़ा'** अपने विषय की मेरी पहली पुस्तक सभा ने छपवा दी है। मानवीय अल्पज्ञता से इसमें मुद्रण दोष तो कुछ रह गये हैं ओर सामग्री छूट भी गई है, परन्तु देश-विदेश से प्राप्त अलभ्य स्रोतों के आधार पर ऋषि-जीवन पर यह सर्वथा नया ग्रन्थ है। अब हमारी अगली ऐसी पुस्तक **'इतिहास बोल रहा है'** की इतिहास-प्रेमी प्रतीक्षा करें। इसमें भी ऋषि जीवन पर जन जागरण के इतिहास पर अप्राप्य स्रोतों के प्रमाणों से नया प्रकाश डाला जायेगा।

परोपकारिणी सभा का इतिहास मुँहज़बानी लिखा गया। सभा की वार्षिक रिपोर्टें किसी ने स्पर्श तक न कीं। पं. गणपति शर्मा जी का कश्मीर शास्त्रार्थ जम्मू में हो गया, स्वामी सत्यप्रकाश को महात्मा आनन्द स्वामी से संन्यास दिलवा दिया गया और स्वामी सोमदेव जी का निधन दो बार करवाया गया। ये महानुभाव बोले ही नहीं। श्री राम जेठमलानी से ही कुछ सीख लेते।

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं वैसे ही जगदीश्वर सब को उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है। **-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४**

मनुष्यों को चाहिये कि सदा यज्ञ का आरम्भ और समाप्ति को करें और संसार के जीव को अत्यन्त सुख पहुँचावें।
-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६२

ऐतिहासिक कलम....

वैदिक ऋषियों का मन्त्रों से संबन्ध

आचार्य उदयवीर शास्त्री

लेख का शीर्षक सुझाया गया-'मन्त्रद्रष्टा ऋषियों का मन्त्रों से सम्बन्ध'। पहले पद के स्थान पर 'वैदिक' पद रख दिया है। कारण यह है कि लेख का विवेच्य विषय है: ऋषियों का मन्त्रों से सम्बन्ध क्या है? यदि पहले ही उन्हें 'मन्त्रद्रष्टा' मान लिया जाता है, तो मन्त्रों के साथ उनका 'द्रष्टृत्व' सम्बन्ध निश्चित हो जाता है, फिर उसमें विवेच्य क्या? विवेचना यह करनी है कि वेद की प्रकाशित पुस्तकों में-सूक्त या अध्याय आदि के प्रारम्भ में-जो ऋषि का उल्लेख रहता है, उसका मन्त्रों से क्या सम्बन्ध है? इसीलिये शीर्षक के आदि में उक्त पद दिया है।

इस दिशा में प्रस्तुत लेख का विषय कुछ सीमित है, 'वैदिक' कहने से चारों वेदों के ऋषियों के सम्बन्ध में विवेचन प्रस्तुत किया जाना चाहिये, पर यहाँ केवल ऋग्वेद के ऋषियों को आधार मानकर विवेचन किया है। आचार्यों ने बताया है कि वेदार्थ अथवा मन्त्रार्थ के जानने में ऋषि और देवता का ज्ञान उपयोगी होता है। इसका विवेचन भी प्रस्तुत लेख का विषय नहीं है, इस प्रकार विवेच्य अर्थ और अधिक सीमित हो गया है। ऋषियों का मन्त्रों से सम्बन्ध जानने के लिये यही शेष रह जाता है कि ऋषि मन्त्रों के रचयिता या कर्त्ता हैं, अथवा मन्त्रार्थ के द्रष्टा? इसके अतिरिक्त, क्या और भी कोई दिशा इस सम्बन्ध में संभव है?

मन्त्रों के साथ ऋषियों के ऐसे सम्बन्ध के विषय में कर्त्ता या द्रष्टा होने का मतभेद पुराना है। वैदिक अवैदिक दोनों प्रकार के साहित्य में ऐसे प्रचुर प्रयोग उपलब्ध हैं, जिनमें कुछ ऋषियों को मन्त्रों का कर्त्ता और अन्य मन्त्रार्थ का द्रष्टा बताते हैं। ऐसी स्थिति में जिज्ञासु के लिये यह जानना-समझना आवश्यक हो जाता है, कि इसमें यथार्थ क्या है?

ऋषि मन्त्रों के कर्त्ता हैं-इस प्रकार के दृष्टिकोण से वेद का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है, विभिन्न ऋषियों ने मन्त्रों की रचना की, इसके लिये कतिपय हेतु इस रूप में प्रस्तुत किये जाते हैं-

(क) जिन ऋषियों का नाम-निर्देश सूक्त आदि के आरम्भ में उपलब्ध है, उसमें अनेक ऋषियों के नाम सूक्त के अन्तर्गत ऋचाओं में सन्निविष्ट पाये जाते हैं। यह ऐसी ही प्रथा का परिणाम है, जैसे आज कोई कवि अपनी कविता में अपना नाम सन्निविष्ट कर देता है। प्रथम पाँच मण्डलों की एक तालिका बना सका हूँ, जिससे यह स्पष्ट होता है, कि इन मण्डलों में कितने ऋषि हैं, और उनमें से कितनों के नाम सूक्तों व ऋचाओं में सन्निविष्ट हैं।

समयाभाव से आगे की तालिका नहीं बनाई जा सकी, पर इतने से समस्त का अनुमान लगाया जा सकता है। तालिका निम्न प्रकार है-

मण्डल	पूर्ण ऋषि संख्या	पठित	अपठित	सन्दिग्ध
१	२४	१८	५	१
२	३	१	२	०
३	१०	४	६	०
४	४	२	२	०
५	४८	३१	१५	२
	--	--	--	--
	८९	**५६**	**३०**	**३**

संभव है, ऋषियों की इस गणना में कुछ भ्रान्ति रह गई हो, पर यह निश्चित है, अधिक सावधानता बरतने पर इस संख्या में कुछ न्यूनता होगी, क्योंकि एक मण्डल में आये ऋषि की दूसरे मण्डल में आने पर अतिरिक्त गणना कर ली गई है। यदि समस्त संख्या में से मन्त्रों में पठित नामों पर प्रतिशत निकाला जाये, तो दो-तिहाई से कुछ अधिक नाम ऐसे हैं, जिनका ऋचाओं में सन्निवेश है। यह स्थिति ऋषियों के मन्त्रों का कर्त्ता होने की पुष्टि करती है।

(ख) अनेक स्थलों पर ऋषि-नाम निर्देश इस रूप में है, कि उससे ऋषियों के मन्त्रकर्त्ता होने की पुष्टि होती है। उदाहरणार्थ दिग्दर्शन मात्र कुछ वचन इस प्रकार हैं-

याभिः (गीर्भिः) कण्वस्य सूनवो हवन्ते (१,४५,५)
प्रस्कण्वस्य श्रुधी हवम् (१,४५,३)
गीर्भिः कण्वा अहूषत (१,४९,४)
तमु त्वा गोतमो गिरा रायस्कामो दुवस्यति (१,७८,२)

अवोचाम रहूगणा अग्नये मधुवद् वचः

(१,७८,५)

इन्द्रं कुत्सो वृत्रहणं.....ऋषिरह्वदूतये

(१,१०६,६)

एतत्त्यत्त इन्द्र वृष्ण उक्थं वार्षागिरा अभि गृणन्ति राधः, ऋज्राश्वः प्रष्टिभिरम्बरीषः सहदेवो भयमानः सुराधाः

(१,१००,१७)।

ब्रह्म स्तोमं गृत्समदासो अक्रन् (२,३९,८)।

इन सन्दर्भों में उन-उन सूक्तों के ऋषियों को मन्त्रों का उच्चारयिता व कर्त्ता स्पष्ट रूप में कहा है।

(ग) ऋषियों के विषय में यह भी ध्यान देने योग्य है, कि उनके पुत्र, पौत्र व वंश आदि का भी निर्देश उपलब्ध होता है। ऊपर उद्धृत पहले तीन सन्दर्भों वाले सूक्तों का ऋषि 'प्रस्कण्व' है। जिसको कण्व का पुत्र बताया गया है। पहले और तीसरे सन्दर्भ से प्रतीत होता है, ये कई भाई थे, दोनों जगह बहुवचन का प्रयोग है।

अगले दो (चौथे-पाँचवें) सन्दर्भों वाले सूक्त का ऋषि रहूगण का पुत्र गोतम है। यहाँ भी दूसरे सन्दर्भ में बहुवचन का प्रयोग ध्यान देने योग्य है। इससे आगे छठे सन्दर्भ वाले सूक्त का ऋषि कुत्स है, जो अङ्गिरा का पुत्र बताया गया है। अगले सातवें मन्त्र वाले सूक्त के कई ऋषि हैं, जो सब वृषागिर् के पुत्र हैं। सायण ने इन सबको राजर्षि लिखा है। इन सभी ऋषियों के नाम सूक्तों में कर्त्ता व रचयिता के रूप में सन्निविष्ट हैं।

अन्तिम उदाहरण गृत्समद ऋषि के सूक्तों का है। समस्त द्वितीय मण्डल का यही मुख्य ऋषि है। प्रारम्भ के कुछ सूक्त 'सोमाहुति भार्गव' के हैं। मध्य में तीन सूक्त (२७-२८) 'कूर्म' नामक ऋषि के हैं, जो गृत्समद का पुत्र है। गृत्समद के दो विशेषण पद ऋषि-सूची में दिये हैं-'भार्गवः, शौनकः'। इससे ज्ञात होता है, यह ऋषि भृगुवंश का है, और 'शुनक' का पुत्र है।

इस मण्डल के ऋषि के विषय में एक और बात ध्यान देने योग्य है। मेरे पास मूल ऋग्वेद (सातवळेकर संस्करण) में सूक्त के पहले जो ऋषि-निर्देश है, वहाँ गृत्समद के आगे कोष्ठ में (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चात्) ये पद निर्दिष्ट हैं। सायण ने मण्डल के प्रारम्भ में आर्षानुक्रमणी के अनुसार लिखा है-पहले यह आङ्गिरस कुल में शुनहोत्र का पुत्र था, यज्ञकाल में असुरों ने इसे पकड़ लिया, इन्द्र ने छुड़ाया। बाद में इन्द्र के कहने से ही यह भृगुकुल के शुनक का पुत्र हो गया।

गाथा का रहस्य अन्वेष्य है। जिस रूप में यह प्रस्तुत है, उससे प्रतीत होता है कि यह इन सूक्तों का रचयिता है। अनेक सूक्तों में इसका नाम मन्त्र सन्निविष्ट है। दो सूक्तों (१८,४१) में 'शुनहोत्र' है। सायण ने पहले स्थल पर इसका अर्थ पात्रविशेष (सुखेन हूयते सोमो यैरिति शुनहोत्राः पात्रविशेषाः) किया है, जबकि दूसरे स्थल पर गृत्समद।

ऋषि मन्त्रद्रष्टा हैं-पूर्व-मत के विपरीत दूसरा मत है कि ऋषि मन्त्रों के कर्त्ता न होकर द्रष्टा हैं। 'मन्त्रद्रष्टा' पद का तात्पर्य है-मन्त्रार्थ को समाधि द्वारा जानकर अभिव्यक्त करने वाले। विभिन्न ऋषियों ने समाधि द्वारा मन्त्रार्थों को समझा-जाना, अनन्तर अध्यापन कराया, एवं उनका प्रचार-प्रसार किया। उन ऋषियों के स्मरणार्थ उनके नाम सूक्त आदि के प्रारम्भ में लिखे चले आते हैं।

वेद-व्याख्याता आचार्यों ने 'ऋषि' पद का जो अर्थ अभिव्यक्त किया है-'**ऋषिर्दर्शनात्**', '**ऋषयो मन्त्रद्रष्टारो भवन्ति**', '**साक्षात्कृतधर्माण ऋषयो बभूवुः**'-उससे ऐसा अभिलक्षित होता है, कि वे मन्त्रों के गूढ़ रहस्यों को समझने वाले, उन अर्थों का साक्षात्कार करने वाले होते थे। मन्त्र प्रथमतः विद्यमान थे, ऋषियों ने उनमें वे गम्भीर निगूढ रहस्य ढूँढ निकाले, जिनको साधारण व्यक्तियों द्वारा समझना सम्भव न था। इससे यह भी प्रतीत होता है कि वेद का वास्तविक मर्म समाधिनिष्ठ योगी द्वारा समझा जाना सम्भव है, ऐसी भावना द्रष्टृवादियों की रही है।

उक्त वादों में आपत्ति-इन दोनों (कर्तृवाद, द्रष्टृवाद)वादों में कतिपय दुःसमाधेय आपत्तियाँ सम्मुख आती हैं। जो संक्षेप में इस प्रकार हैं-

१. दोनों वादों में ऋषियों को व्यक्ति-विशेष स्वीकार किया गया है, यह निश्चित है। अनेक सूक्तों के ऋषि तिर्यक् प्राणी व जड़ पदार्थ हैं। संक्षेप से निम्न उदाहरण प्रस्तुत हैं-

कपोतो नैर्ऋतः (१०,१६५)।

अर्बुदः काद्रवेयः सर्पः (१०,९४)।

मत्स्यः सांमदः बह्वो वा मत्स्या जालनद्धाः

(८,६७)।

सरमा देवशुनी ऋषिका (१०,१०८)।

सौचीक अग्निः (१०,५१-५३)।

सर्प ऐरावतो जरत्कर्णः (१०,७६)।

ऊर्ध्वग्रावा सर्प आर्बुदिः (१०,१७५)।

अभितपाः सौर्यः (१०,३७)।

विभ्राट् सौर्यः (१०,१७०)।

नद्यः ऋषिकाः (३,३३)।

ऋषियों के इस निर्देश को व्यक्ति विशेष का नाम नहीं कहा जा सकता। प्रायः इन सभी ऋषियों के नाम मन्त्रों में सन्निविष्ट हैं। द्रष्टृवाद में यह कैसे सम्भव है?

२. ऋषिविषयक कतिपय निर्देश ऋषि-सम्बन्धी अज्ञान, सन्दिग्ध ज्ञान आदि को अभिव्यक्त करते हैं। कतिपय उदाहरण अति संक्षेप में इस प्रकार हैं-

अन्य च दृष्टलिङ्गाः ऋषयः (५,४४)।

इसका तात्पर्य है, ऋषि-विषयक जानकारी नहीं है, सूक्त या मन्त्र में इसके लिये जो चिह्न दीखें, उसके अनुसार ऋषि की कल्पना कर लेनी चाहिये। इसके अनुसार अनेक नाम दिये गये हैं, जो व्यक्ति-विशेष के नाम सम्भव नहीं।

जहाँ ऋषि-निर्देश का विकल्प है, वहाँ सर्वत्र ऋषिविषयक जानकारी में सन्देह का द्योतक है। अनिश्चय का दूसरा रूप है-

शतं वैखानसाः (९,६६), **मुनयो वातरशनाः** (१०,१३६), **सप्त ऋषय एकर्चाः** (१०,१३७)।

यहाँ पहले सौ का कुछ पता नहीं, अगले पद इसी रूप में मन्त्र में सन्निविष्ट हैं। आचार्यों ने उन मुनियों की गणना की है, पर आधार का पता नहीं। अन्तिम में सात ऋषि आचार्यों ने गिनाये हैं, पर यहाँ भी आधार का पता नहीं।

अन्नदान प्रशंसा में ऋषि 'भिक्षु' लिखा है (१०,११७), यह किसी व्यक्ति विशेष का नाम प्रतीत नहीं होता।

३. अनेक सूक्तों में ऋषि और देवता एक ही है। जैसे- १०। १५१, १६१, १६२, १७८। क्या ऐसा सम्भव है कि ऋषि स्वयं अपनी स्तुति कर रहा है? मन्त्रों में यह स्पष्ट नहीं है।

४. चौथे प्रकार की आपत्ति संवाद-सूक्तों के आधार पर है। एक मन्त्र में जो ऋषि है, वह दूसरे में देवता बन जाता है। जो पहले में देवता है, वह दूसरे में ऋषि। अनेक संवादों में एक पक्ष तिर्यक् प्राणी तथा भौतिक जड़ पदार्थ है जैसे- सरमापणि संवाद तथा नदी-विश्वामित्र संवाद। यह आपत्ति-विषयक दिग्दर्शनमात्र है।

ऋषि, कवि-निबद्ध वक्ता हैं- इन सब परिस्थितियों पर ध्यान देते हुए हमारा विचार है कि ''ऋषि कवि-निबद्ध वक्ता हैं।'' वेद के कवि ने रचयिता ने प्रतिपाद्य विषय के अनुकूल जो उपयुक्त समझा, वही नाम-पद वक्ता के रूप में निर्दिष्ट कर दिया है। यह मूल रूप में किसी व्यक्ति के नाम नहीं हैं, केवल कल्पित हैं। वेद का कवि रचयिता कौन है? यह विषय अलग है, उसका विवेचन इस समय हमारा लक्ष्य नहीं।

कवि-निबद्ध वक्ता का स्वरूप ऐसा ही है, जैसे पञ्चतन्त्र में विष्णु शर्मा ने-करटक, दमनक, संजीवक, लघुपतनक आदि नामों का प्रतिपाद्य विषय के वक्ता के रूप में निबन्धन किया है। कवि प्रतिपाद्य अर्थ को जिसके द्वारा कहलवाना उपयुक्त समझता है, उसको वक्ता के रूप में वहाँ निबद्ध कर देता है। वह सब रचना कवि की होती है। अभिज्ञान शाकुन्तल में 'गाहन्तां महिषा निपानसलिलम्' इत्यादि पद्य का वक्ता दुष्यन्त है। निश्चित है, यह रचना कालिदास की है, दुष्यन्त की नहीं। कालिदास इसका कवि है, दुष्यन्त कवि-निबद्ध वक्ता है।

भगवद्गीता या महाभारत तथा अन्य विस्तृत साहित्य में सर्वत्र इस प्रकार निर्दिष्ट कवि-निबद्ध वक्ता देखे जा सकते हैं। गीता आदि में अर्जुन, कृष्ण, दुर्योधन आदि सब कवि-निबद्ध वक्ता हैं। इस काव्य का रचयिता कृष्ण द्वैपायन वेद-व्यास है। यद्यपि लौकिक साहित्य में कल्पित व ऐतिहासिक दोनों प्रकार के 'वक्ता' हैं। पर यह वस्तुस्थिति को स्पष्ट करने के लिये उक्त निर्देश प्रस्तुत किये हैं।

इस भावना के साथ ऋषिविषयक विचार करने पर पूर्वोत्थापित आपत्तियाँ अदृश्य जैसी हो जाती हैं। तिर्यक् प्राणी या भौतिक जड़ पदार्थ कवि ने उपयुक्त अवसरों पर वक्तारूप में निबद्ध कर दिये हैं। ऋषि विषयक अज्ञान, सन्देह एवं विकल्प आदि प्रायः उन्हीं स्थलों में हैं, जहाँ कवि-निबद्ध वक्ता के रूप में किसी नाम का निर्देश नहीं है। अन्न-दान की स्तुति भिक्षु द्वारा की जानी मौजूँ मालूम देती है। जो नाम वेद में इस प्रकार वक्ता के रूप में निर्दिष्ट किये गये हैं, वे 'यस्य वाक्यं स ऋषिः' के अनुसार ऋषि के रूप में जाने गये हैं, पर सम्भवतः आज उनके वास्तविक गूढ़ रहस्यपूर्ण अर्थ को भुलाया जा चुका है। ऋषि का ज्ञान मन्त्रार्थ के समझने में तभी सहायक या उपयोगी हो सकता है, जब समाधि द्वारा उसे जाना जा सके।

वेद के विद्वान् इस पर विचार करें, इसी भावना से यह लघुकाय लेख प्रस्तुत किया है।

परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें, अन्यथा शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। **परोपकारी पत्रिका कार्यालय से निरन्तर भेजी जाती है, फिर भी जिन लोगों के पास पत्रिका का कोई अंक प्राप्त ना हुआ हो तो कृपया पत्र या दूरभाष द्वारा हमें सूचित करें, ताकि हम वह अंक पुनः भेज सकें, साथ ही अपने डाकघर में इसकी जाँच आदि भी करें।**

धनराशि भेजने हेतु सूचना

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित सभा है एवं उनके कार्यों को आगे बढ़ाने के लिय कृत-संकल्प है। सभा द्वारा ऋषि के स्वनानुरूप गुरुकुल, संन्यास एवं वानप्रस्थाश्रम, ध्यान शिविर, वैदिक साहित्य का प्रकाशन, देश में प्रचार, परोपकारी पत्रिका के माध्यम से जन-जागरण, भव्य अतिथिशाला, भोजनशाला आदि अनेक प्रकल्पों का संचालन हो रहा है। ये सभी कार्य आर्यजनों के सात्विक दान से ही होते हैं। अतः दानी महानुभावों से निवेदन है कि वेद, ईश्वर, दयानन्द के इस कार्य में अपना सहयोग अवश्य प्रदान करें।

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उन पर '**परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया, राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।
IFSC - SBIN0007959

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं, वैसे ही जगदीश्वर सब को उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४१

वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

शुभास्ते सन्तु पन्थानः

तपेन्द्र

इन्द्रियाँ व मन जब सांसारिक विषयों से रुक जाते हैं तो मन में एकाग्र स्थिति आ जाती है। इसी एकाग्र अवस्था में आत्मा का साक्षात्कार होता है। जब मन में कोई आलम्बन भी शेष नहीं रहता, संस्कार शेष होते हैं, यह मन की निरुद्ध अवस्था है, इस अवस्था में आत्मा बिना किसी अन्य करण की सहायता के सीधे परमात्मा का साक्षात्कार करता है। अभ्यास करते-करते योगी के संस्कार दग्धबीज हो जाते हैं तथा वह जीवन्मुक्त हो जाता है। देहावसान के बाद ३६००० बार सृष्टि की उत्पत्ति व प्रलय की अवधि पर्यन्त मुक्ति का आनन्द भोगता है। मुक्ति दुःखों की आत्यन्तिक निवृत्ति का नाम है।

अभ्यास और वैराग्य सांसारिक विषयों से मन को रोकने के उपाय हैं। वस्तुओं/पदार्थों का सही-सही ज्ञान होगा तो उनका सही उपयोग लिया जा सकेगा। गलत जानकारी होगी तो उपयोग भी नहीं लिया जावेगा तथा हानि भी होगी। इस संसार में ईश्वर, जीव व प्रकृति-तीन ही सत्तात्मक पदार्थ हैं। ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है। जीवात्मा शुद्धस्वरूप, अल्पज्ञ, और परिमित गुण-कर्म-स्वभाव वाला है, बल, पराक्रम, आकर्षण, प्रेरण आदि २४ प्रकार के स्वाभाविक गुण व शक्तिवाला है। आत्माएँ अनन्त हैं तथा चेतन हैं। शेष समस्त पदार्थ, अन्तकरण-मन बुद्धि अहंकार से लेकर स्थूल पृथिवी आदि पर्यन्त सभी सत्त्व, रज, तम से बने हैं तथा चेतन नहीं है। सांसारिक पदार्थों से, उनके भोग से जो सुख की प्राप्ति/अनुभूति होती है वह दुःखमिश्रित है, सापेक्ष भी है। जो जिससे बनेगा, उसमें उसके गुण आयेंगे ही।

जब साधक पदार्थों के गुणों का समुचित ज्ञान करता है तो संसार के विषय भोगों की निस्सारता को, दुःख को समझ लेता है। इस ज्ञान से ही 'वैराग्य' होता है। ज्ञानपूर्वक किसी विषय को त्याग देना-उस विषय के प्रति तृष्णा न होना वैराग्य है। ज्ञान की पराकाष्ठा वस्तुतः वैराग्य है। उस ज्ञान को आधार मानकर विषयों से मन व इन्द्रियों को दूर करने का प्रयत्न 'अभ्यास' है। अभ्यास व वैराग्य से मन व इन्द्रियों को संसार के विषयों से मोड़कर अन्तर्मुखी बनाया जा सकता है। जब ज्ञानपूर्वक संसार की वस्तुओं की वास्तविकता समझकर साधक ईश्वर की प्राप्ति की उत्कट इच्छा करता हुआ ईश्वर-प्रणिधान करता है तो समाधि की सिद्धि होती है। जिस में प्रीति होगी, मानव वही कार्य करेगा। जब भगवान् में प्रीति होगी तो उसे प्राप्त करने का कार्य ही करेगा। वह संसार से राग नहीं रखेगा, अतः ईश्वर प्राप्ति होगी ही। उपनिषद् में भी कहा गया है-

यदा सर्वे प्रमुच्यन्ते कामा येऽस्य हृदि श्रिताः।
अथ मर्त्योऽमृतो भवति अत्र ब्रह्म समश्नुते।।

- कठ ६.१४

योग दर्शन के विभिन्न सिद्धान्तों का अध्ययन व अभ्यास आपके द्वारा किया गया है। प्राणायाम के विषय में थोड़ा विचार करेंगे। योग का प्रथम मुख्य बिन्दु है- मन को रोकना। मन प्राण के बन्धनवाला है, अतः प्राण के स्थिर होने से मन स्थिर हो जाता है।

''स यथा शकुनिः सूत्रेण प्रबद्धो दिशं दिशं पतित्वान्यत्रायतनमलब्ध्वा बन्धनमेवोपाश्रयत एवमेव खलु सोम्य तन्मनो दिशं दिशं पतित्वान्यत्रायतनमलब्ध्वा प्राणमेवोपाश्रयते प्राणबन्धनं हि सोम्य मन इति।''

- (छान्दोग्य ६.८.२)

जैसे डोर से बँधा हुआ पक्षी दिशा-दिशा में उड़-उड़ कर जाता है, कहीं ठिकाना न पाकर जहाँ बँधा होता है, वहीं आकर आश्रय पाता है, हे सौम्य! इसी प्रकार मन दिशा-दिशा में उड़कर जाता है, कहीं ठिकाना न पाकर प्राण का ही सहारा लेता है। प्राण मन का बन्धन है-अधिष्ठान है।[१]

योग का दूसरा मुख्य बिन्दु है-अज्ञान को नष्ट करना तथा ज्ञान को बढ़ाना। **ततः क्षीयते प्रकाशावरणम्** के अनुसार प्रकाश का आवरण जो अज्ञान है वह प्राणायाम से

नष्ट होता है तथा ज्ञान बढ़ता है। महर्षि ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में लिखते हैं, ''इस प्रकार प्राणायामपूर्वक उपासना करने से आत्मा के ज्ञान का आवरण=ढांपने वाला जो अज्ञान है वह नित्यप्रति नष्ट होता जाता है और ज्ञान का प्रकाश धीरे-धीरे बढ़ता है।'' **धारणासु च योग्यता मनसः** सूत्र की व्याख्या करते हुए महर्षि लिखते हैं,

''**प्राणायामभ्यासादेव प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य इति वचनात् प्राणायामानुष्ठानेन उपासकानां मनसो ब्रह्मध्याने सम्यक् योग्यता भवति।**''

'**प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य**' की व्याख्या करते हुए महर्षि सत्यार्थप्रकाश में प्राणायाम करने की विधि बताते हैं, ''जैसे अत्यन्त वेग से वमन होकर अन्न बाहर निकल जाता है, वैसे प्राण को बल से बाहर फेंक के बाहर ही यथाशक्ति रोक देवे। जब बाहर निकालना चाहे, तब मूलेन्द्रिय को ऊपर खींच के वायु को बाहर फेंक दे। जब तक मूलेन्द्रिय ऊपर खींच रखे, तब तक प्राण बाहर रहता है। इसी प्रकार प्राण बाहर अधिक देर ठहर सकता है। जब घबराहट हो तब धीरे-धीरे भीतर वायु को ले के फिर भी वैसे ही करता जाये जितना सामर्थ्य व इच्छा हो और मन में ओ३म् का जप करता जावे।'' भूमिका में इसी प्रसंग में महर्षि लिखते हैं, ''इस प्रकार बारंबार अभ्यास करने से प्राण उपासक के वश में हो जाता है और प्राण के स्थिर होने से मन, मन के स्थिर होने से आत्मा भी स्थिर हो जाता है।''

चंचल मन को स्थिर करना, बाहर की ओर जाने वाले इन्द्रियों सहित मन को एकाग्र करना समाधि प्राप्ति हेतु आवश्यक है। महर्षि के अनुसार प्राणायाम के अभ्यास से मन और आत्मा स्थिर होते हैं।

तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात्।

मनु महाराज के अनुसार प्राण के निग्रह से मन आदि इन्द्रियों के दोष भस्म हो जाते हैं। **प्राणायामैर्दहेद्दोषान्** के अनुसार भी नित्यप्रति प्राणायामों से आत्मा, अन्तःकरण और इन्द्रियों के दोष भस्मीभूत हो जाते हैं। (सत्यार्थप्रकाश) अतः प्रत्येक साधक के लिए प्राणायाम का अभ्यास करना आवश्यक है। केवल वैराग्य से-ज्ञान से चित्तवृत्तियों का निरोध नहीं हो सकता। योगदर्शन में भी कहा है, ''**अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः।**'' निर्मली वृक्ष के फल से जल शुद्ध होता है, परन्तु नाम लेने से या श्रवण मात्र से ही जल शुद्ध नहीं हो जाता, उसके लिए जल में फल को पीस कर डालना पड़ता है।

साधकगण! स्वाध्याय से, सत्संग से, गुरुजनों से ज्ञान प्राप्त करना, उस ज्ञान के अनुरूप दिनभर व्यवहार करने का अभ्यास करना, प्रत्येक कार्य करते हुए ईश्वर-प्रणिधान की भावना रखना आवश्यक है। निश्चित समय में बैठकर प्राणायामादि का अभ्यास व उपासना तो करनी ही है। **ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।** (यजुर्वेद) के अनुसार ईश्वर सर्वव्यापक सर्वान्तर्यामी है, हमारे आत्मा में बैठा हुआ हमारे अच्छे-बुरे कर्मों को देख रहा है। **अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्**-(अत्रि स्मृति) अनुसार ईश्वर न्यायकारी है तथा पाप-पुण्यों का यथोचित फल देता है, किसी के पापों को क्षमा नहीं करता। **अवश्यमेव लभते फलं पापस्य कर्मणः।** (वाल्मीकि रामायण) अनुसार भी पाप का फल अवश्य भोगना पड़ता है। यदि इस सिद्धान्त को मन में बैठा लिया जावे तो व्यक्ति तात्कालिक स्वार्थ के वशीभूत जो दुष्कर्म-पाप कर लेता है, उसे नहीं करेगा। हम इस सिद्धान्त को जानते तो हैं, परन्तु उस पर अटल आस्था न होने के कारण पाप-कर्म करते रहते हैं।

हम कर्म करते हैं तो उसका संस्कार बनता है- अच्छा या बुरा। उस संस्कार से फिर कर्म होता है। इस प्रकार कर्म से संस्कार तथा संस्कार से कर्म यह चक्र चलता रहता है तथा मन सांसारिक विषयों से निवृत्त नहीं हो पाता बल्कि उन्हीं में उलझा रहता है। अतः कार्य करने से पूर्व यह चिन्तन आवश्यक है कि इससे क्या संस्कार बनेगा? वृत्तियों से चित्त को रोकने का प्रयास तो करना ही है, साथ ही संस्कार कैसे बन रहे हैं-यह भी साथ-साथ देखना है। प्रत्येक समय यह बोध रखना है कि हम किसी कर्म से राग-द्वेष आदि तो नहीं उभार रहे। यह ध्यान रखना है कि यम नियमों के पालन में शिथिल तो नहीं हो रहे। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह तथा शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वरप्रणिधान-इनके जो अनुकूल है, वही करने योग्य है। जो इनके प्रतिकूल है, वह त्याज्य है। यदि कर्म

करने से पहले सोचने का अवसर नहीं ले पाये तो कम से कम कर्म करने के उपरान्त तो विचार करना आवश्यक है कि यह करणीय कर्म था या त्याज्य। यदि त्याज्य था, हो गया, तो आगे नहीं करने का संकल्प लेना है।

सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः।

सत्य की ही विजय होती है, असत्य की नहीं। देव की तरफ जाने वाला मार्ग सत्य से बना है। साधकगण! इस पर दृढ़ विश्वास करके सत्य मार्ग के पथिक बन जाओ। संसार की चकाचौंध उलझाना चाहेगी, क्योंकि

'हिरण्यमयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।'

(ईशोपनिषद्)

सत्य का मुख सोने के ढक्कन से ढका हुआ है, अतः लोकैषणा, पुत्रैषणा व वित्तैषणा आकर्षित करेगी, परन्तु इसकी दुःखमयता को, वास्तविकता को समझकर वेद की आज्ञा को मान विश्वास के साथ अध्यात्म मार्ग-श्रेय मार्ग की ओर बढ़ चलो। आज ही बढ़ना शुरु कर दो। समय रहते ज्ञानपूर्वक-अभ्यासपूर्वक इन सांसारिक विषयों को छोड़ दो, क्योंकि ये विषय जब स्वेच्छा से मनुष्य को त्याग कर जाते हैं, तो मनुष्य को महासन्ताप होता है, किन्तु जब स्वयं मनुष्य के द्वारा त्याग दिये जाते हैं, तो ये शान्तिपूर्ण अतुल सुख प्रदान करते हैं।[२]

व्रजन्तः स्वातन्त्र्यादतुलपरितापाय मनसः,
स्वयं त्यक्त्वास्त्वेते शमसुखमनन्तं विदधति।।

– वैराग्य शतक।। १६

शरीर स्वस्थ है तो आसन लगाया जा सकता है, शरीर स्वस्थ है तो प्राणायाम किया जा सकता है, शरीर स्वस्थ है तो तप किया जा सकता है। शरीर में रोग है तो मन स्वस्थ होना संभव नहीं। मन स्वस्थ नहीं तो एकाग्रता संभव नहीं, अतः योग संभव नहीं।

यावत्स्वस्थमिदं शरीरमरुजं, यावच्च दूरे जरा,
यावच्चेन्द्रिय शक्तिरप्रतिहता, यावत् क्षयो नायुषः।
आत्मश्रेयसि तावदेव विदुषा, कार्य प्रयत्नो महान्,
प्रोद्दीप्ते भवने तु कूपखननं, प्रत्युद्यमः कीदृशः।।

– वैराग्य शतक।।

जब तक यह शरीर स्वस्थ है-नीरोग है और जब तक बुढ़ापा दूर है, जब तक इन्द्रियों का सामर्थ्य कम नहीं होता और जब तक आयु क्षीण नहीं होती, तब तक ही विद्वान् मनुष्य को आत्म-कल्याण के विषय में महान् प्रयत्न करना चाहिये। बुढ़ापा आदि आ जाने पर आत्मकल्याणार्थ प्रयत्न करना तो ऐसा ही है, जैसा घर में अग्नि लग जाने पर उसे बुझाने हेतु कूप खोदना।

अतः श्रद्धापूर्वक गन्तव्य के लिए निकल पड़ो। श्रद्धा माता के समान कल्याणकारिणी होकर आपकी रक्षा करेगी। **'सा हि जननी कल्याणी योगिनं पाति।'** (व्यास भाष्य)

शुभास्ते सन्तु पन्थानः

जयपुर, राज.

सन्दर्भ- १. डॉ. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

मनुष्यों को चाहिये कि अपने पुरुषार्थ से सुवर्ण आदि धन को इकट्ठा कर घोड़े आदि उत्तम पशुओं को रक्खें क्योंकि जब तक इस सामग्री को नहीं रखते तब तक गृहाश्रमरूपी यज्ञ परिपूर्ण नहीं कर सकते इसलिये सदा पुरुषार्थ से गृहाश्रम की उन्नति करते रहें। **– महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६३**

ईश्वर का आश्रय न करके कोई भी मनुष्य प्रजा की रक्षा नहीं कर सकता। जैसे ईश्वर सनातन न्याय का आश्रय करके सब जीवों को सुख देता है, वैसे ही राजा को भी चाहिये कि प्रजा को अपनी न्याय-व्यवस्था से सुख देवे।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.३९

शङ्का समाधान - १३

डॉ. वेदपाल, मेरठ

शङ्का-आत्महत्या किए हुए जीव की क्या गति होती है, क्या ऐसे जीव की मुक्ति होती है?

पवन कुमार, जबलपुर

समाधान-आत्महत्या के सन्दर्भ में यह अवधेय है कि-

न जायते म्रियते वा विपश्चिन्नायं कुतश्चिन्न बभूव कश्चित्।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे।।

-कठोपनिषद् २.१८

आत्मा न जन्म लेता है और न ही मरता है। यह अज, नित्य और शाश्वत है। शरीर के नष्ट होने पर भी यह नष्ट नहीं होता है। इस स्थिति में आत्मा-जीव की हत्या का प्रश्न किस प्रकार किया जा सकता है?

आत्मा-जीव का महत्त्वपूर्ण स्वाभाविक गुण है-प्रयत्न। न्याय १.१.१० तथा वैशेषिक ३.२.४ में आत्मा के गुण वर्णित हैं, इनमें प्रयत्न परिगणित है। मनुष्य देह (अन्य योनियों में भी) को धारण करने पर उसके प्रयत्न गुण को सार्थक करने के साधन/करण उपलब्ध हो जाते हैं। करण दो प्रकार के हैं-

१. बाह्य-पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ तथा पाँच कर्मेन्द्रियाँ बाह्य करण (कर्मेन्द्रियाँ तो स्पष्टतः बाहर दिखाई ही देती हैं, ज्ञानेन्द्रियों के गोलक भी बहिर्मुख हैं। इसलिए इन्हें बाह्य करण कहा जाता है।) हैं।

२. अन्तः-इनमें प्रमुख है-मन। यह आन्तरिक होने के कारण बाहर दृष्टिगोचर नहीं होते, अपितु इनके माध्यम से होने वाली क्रियाएँ अथवा उनके परिणाम दृष्टि का विषय बनते हैं।

लोकदृष्टि से व्यक्ति जब बहिरिन्द्रियों की सहायता से किसी कर्म को करता है, तब वह लोक नियम-कानून, विधि-अनुसार उसका फल प्राप्त करने का अधिकारी (जिस प्रकार श्रमिक शारीरिक श्रम करने पर पारिश्रमिक, चोर पर-धन आदि हरण करने पर कारावास आदि का अधिकारी-पात्र) होता है।

अन्तःकरण के स्तर पर होने वाले कर्म पर लौकिक नियम अप्रभावी रहते हैं, किन्तु ईश्वरीय व्यवस्था में कर्म फलानुषंगी है। कर्म का फल उसके प्रारम्भिक बिन्दु मानसिक स्तर पर हुए विचार से ही प्रारम्भ हो जाता है, क्योंकि दृश्यमान कर्म कर्म का अन्तिम छोर है तथा प्रारम्भिक छोर मनन है। तद्यथा-

क- यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते-यजु. ३४.३

ख- मन एवैतदेतस्मै कर्मणे युंक्ते न ह्ययुक्तेन मनसा किञ्चन सम्प्रति शक्नोति कर्तुम् -श.प. ६.३.१.१४

ग- यन्मनसा ध्यायति तद् वाचा वदति,
यद् वाचा वदति तत् कर्मणा करोति,
यत् कर्मणा करोति तदभिसम्पद्यते।

कोई व्यक्ति पर-द्रव्यहरण (चोरी) का विचार करता है, परन्तु अपने इस विचार को क्रिया में परिणत नहीं करता अथवा कर पाने में किसी भी कारण से असफल हो जाता है, तब वह जागतिक दृष्टि से चोर नहीं है। किन्तु अन्तः संकल्प का परिणाम होता है कि परद्रव्य हरण की प्रवृत्ति-स्वभाव बनने लगता है। यही संकल्प कर्म का मूल है। अतः शास्त्रकार इनके फल का वर्णन करते हैं, क्योंकि वह कर्म को शारीरिक स्तर से पूर्व वाचिक और उससे भी पूर्व मानसिक स्तर पर किया जाना स्वीकार करते हैं।

आत्महन्ता दो स्तर पर कर्म (आत्महत्या) करता है-

१. मानसिक स्तर पर-लौकिक दृष्टि से आत्महत्या की क्रियान्विति से पूर्व व्यक्ति के मन में निराशा के भाव बढ़ जाने पर जीवन की सार्थकता समाप्त होती दिखाई देती है। वह अवसाद से ग्रस्त होकर जीवनलीला समाप्त करने का संकल्प करता है। यदि संकल्प बद्धमूल है, तब वह आत्महनन का निर्णय लेता है।

२. शारीरिक स्तर पर-आत्महत्या के संकल्प के बद्धमूल हो निर्णीत होने पर व्यक्ति वह कार्य (जैसे-किसी ऐसे पदार्थ का सेवन, जल में डूबकर, अग्नि में कूदकर, विषपान कर या स्वयं को गोली आदि मारना।) करता है, जिससे शारीरिक चेष्टाएँ अवरुद्ध हो जाती हैं तथा आत्मा का शरीर से पृथक्करण हो जाता है। इसे ही लोक में आत्महत्या माना जाता है। इन्हीं कर्मफल के सन्दर्भ में मनु का कथन है-

शरीरजैः कर्मदोषैर्याति स्थावरतां नरः।
वाचिकैः पक्षिमृगतां मानसैरन्त्यजातिताम्।।

–मनु. १२.९

अर्थात् मानस (वह कर्म जो क्रियान्वित नहीं हुए, अपितु केवल मानस व्यापार–संकल्प विकल्प तक ही सीमित थे।) कर्मों=तामस कर्मों का फल उस जीव को अतिनिकृष्ट जाति–कुल में जन्म की प्राप्ति है। शरीर से कृत अर्थात् कार्यरूप में सम्पन्न तामस कर्मों का फल स्थावर=वृक्ष आदि योनियों की प्राप्ति है। वेद का स्पष्ट निर्देश है–

असुर्या नाम ते लोकाऽअन्धेन तमसावृताः।
तांस्ते प्रेत्यापि गच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः।।

–यजु. ४०.३

आत्म–हनन रूपी कार्य सामान्यतः शरीर और आत्मा के पृथक्करण को ही समझा जाता है, किन्तु शरीर से आत्मा को पृथक् किए बिना किए जाने वाले वे सब कार्य–जिनमें आत्मा की आवाज, उसके संकेत–निर्देश की अवहेलना कर किए जाते हैं अथवा आत्मिक पतन के कारक कर्म हैं, वह सब आत्मा के हनन से न्यून नहीं हैं।

महर्षि दयानन्द उपर्युद्धृत मन्त्रस्थ 'आत्महनः' पद का अर्थ करते हुए लिखते हैं–

''आत्महनः= य आत्मानं घ्नन्ति तद्विरुद्धमाचरन्ति''

–'आत्मा के विरुद्ध आचरण करने हारे।'

आचार्य शंकर अविद्यादोष के कारण आत्मतिरस्कार को आत्महनन मानते हैं–

''ये के चात्महनः आत्मानं घ्नन्तीत्यात्महनः।
के ते जना येऽविद्वासः।
कथं ते आत्मानं नित्यं हिंसन्ति?
अविद्यादोषेण विद्यमानस्यात्मनस्तिरस्करणात्''

–ईशोपनिषद्भाष्ये।

लौकिक दृष्टि से आत्महत्या करने वाला स्यात् एक ही बार आत्महत्या करता है, किन्तु आत्मा को इस प्रकार की नीच योनियों, जो मात्र भोगयोनि हैं में जाने के योग्य बनाने वाला, मलिन आचरणकर्त्ता भले ही शरीर नाश न करे, किन्तु आत्महन्ता तो है ही।

इस प्रकार आत्महन्ता चाहे शरीर–आत्मा का पृथक् करण कर उसके प्रयत्न गुण का बाधक हो अथवा आत्मा के विरुद्ध आचरण कर आत्मतिरस्कार–कर्त्ता हो, मुक्ति प्राप्त करने का अधिकारी नहीं है।

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को स्थान दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अतः सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अतः लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हों। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल–दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत–अस्वीकृत होने की सूचना चल–दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छः माह या अधिक समय भी लग सकता है, अतः कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **–संपादक**

जो विद्वान् लोग परोपकार बुद्धि से विद्या का विस्तार करने, सुगन्धि, पुष्टि, मधुरता रोगनाशक गुणयुक्त पदार्थों का यथायोग्य मेल अग्नि के बीच में उनका होम कर शुद्ध वायु, वर्षा का जल वा ओषधियों का सेवन करके शरीर को आरोग्य करते हैं वे इस संसार में अत्यन्त प्रशंसा के योग्य होते हैं।

– महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५८

वैदिक पुस्तकालय अजमेर
द्वारा प्रकाशित व उपलब्ध नये संस्करण

१. सत्यार्थ प्रकाश में क्या है? **लेखक - प्रो. धर्मवीर,** **प्रकाशक**- परोपकारिणी सभा, अजमेर,
पृष्ठ संख्या- ३२ **मूल्य** - रु. १५/-

प्रस्तुत पुस्तक डॉ. धर्मवीर जी के युवापन की रचना है। इस पुस्तक को पं. भारतेन्द्रनाथ जी (महात्मा वेदभिक्षु) ने डॉ. धर्मवीर जी से आग्रहपूर्वक लिखवाया था। पहली बार इसे सन् १९७५ में महात्मा वेदभिक्षु जी ने ही प्रकाशित किया था। एक लम्बे अन्तराल के बाद परोपकारिणी सभा ने इसका पुन:प्रकाशन किया है। इस पुस्तक को पढ़कर नये से नया व्यक्ति भी सत्यार्थप्रकाश के महत्व को समझ सकता है अर्थात् यह पुस्तक आर्यसमाज के प्रचार में सहायक सिद्ध हो सकती है। आर्य महानुभावों से अनुरोध है कि इसे अधिक से अधिक संख्या में खरीदकर नई पीढ़ी तथा नये लोगों को वितरित करें तथा प्रकाशकों से भी निवेदन है कि अधिक से अधिक संख्या में इसे मंगायें ताकि लोग इसे खरीद सकें। इस ग्रन्थ को पढ़ने से ऋषि दयानन्द के अमरग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश को पढ़ने की प्रेरणा मिलती है। सत्यार्थप्रकाश की समस्त विषयवस्तु को इस ग्रन्थ में समाहित किया गया है। पाठक इसे पढ़कर लाभ उठायेंगे, ऐसा हमारा विश्वास है।

२. महर्षि दयानन्द का पत्र-व्यवहार (दो भाग में)
मूल्य - रु. ८००/- पृष्ठ संख्या - प्रथम व द्वितीय भाग-६९६+६९६
महर्षि दयानन्द का महत्त्वपूर्ण पत्र-व्यवहार मूल्य - रु. ४००/- पृष्ठ संख्या - ६१६

ऐतिहासिक महत्त्व का ग्रन्थ है। इस संस्करण की यह विशेषता है कि पत्र और उसका उत्तर साथ-साथ दिये गए हैं। आर्य जाति और आर्यावर्त्त के उत्थान की महती आकांक्षा ऋषिवर के पत्रों में स्पष्ट झलकती है। माननीय डॉ. वेदपाल जी द्वारा सम्पादित यह ग्रन्थ पठनीय एवं संग्रहणीय है। साज-सज्जा और मुद्रण भी उत्तम है। समाप्त होने से पहले- पहले क्रय कर लेवें तो अच्छा रहेगा।

३. 'नवयुग की आहट',महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन-चरित
मूल्य - रु. ६०/- पृष्ठ संख्या- १९२

१०० से अधिक उपशीर्षकों एवं १३ अध्यायों में लिखा गया ऋषि का यह अनुपम जीवन चरित है। लेखक हैं- ऋषि मिशन के दीवाने, आर्यजाति के प्रहरी, दिलजले आर्य साहित्यकार प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु। पुस्तक में आप जान पायेंगे कि ऋषि का पाखण्ड-खण्डन, सामाजिक दोषों के निराकरण, स्त्री-शिक्षा, अछूतोद्धार, वेदोद्धार, सामाजिक पुनर्जागरण, राष्ट्र-उद्धार के क्षेत्र में क्या योगदान है तथा उनके समकालीन और परवर्ती महापुरुष उनके विषय में क्या कहते हैं।

४. इतिहास की साक्षी: लेखक- प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु मूल्य - रु. ५०/- पृष्ठ संख्या - ९६

९६ पृष्ठों की इस पुस्तक में विद्वान् लेखक ने महर्षि दयानन्द सरस्वती एवं पं. श्रद्धाराम फिल्लौरी के सम्बन्ध में तथ्यात्मक जानकारी दी है। श्रद्धाराम फिल्लौरी के हाथ के लिखे पत्र की एवं अन्य ऐतिहासिक दस्तावेजों की फोटो कापियाँ इसमें दी हैं, जो अन्यत्र दुर्लभ हैं।

५. असली महात्मा (हिन्दी) मूल्य - रु. २००/- पृष्ठ संख्या - २४७

यह पुस्तक मूलरूप से तेलुगु में लिखी गई है। लेखक श्री एम.वी.आर. शास्त्री ने जिस शोधपूर्ण ढंग से और जिस सरसता से इस पुस्तक को लिखा है, उससे दस्तावेजों में रुचि रखने वालों और उपन्यास में रुचि रखने वालों के लिये भी यह एक अतुलनीय ग्रन्थ है। हिन्दी में अनुवाद करते समय श्री जे.एल. रेड्डी ने लेखक के मूल भावों को जिस दक्षता से संजोया है, उससे हिन्दी पाठकों को ये ऐतिहासिक दृष्टि वाला ग्रन्थ किसी उपन्यास से कम नहीं लगेगा।

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली
पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाता धारक का नाम - **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर।**
बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**
बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**
IFSC - PUNB0000800

चमत्कारों का पोल खाता

इन्द्रजित् देव

विज्ञान का एक सर्वमान्य नियम है- बिना किसी कारण के कार्य नहीं होता। लोहे के बिना रेल का पहिया अथवा पटरी बन नहीं सकती। लोहा रेल का कारण तथा रेल का पहिया अथवा पटरी कार्य हैं। इसी प्रकार रोटी कार्य है तो आटा कारण है। आटा को कार्य भी माना जा सकता है। तब इस कार्य का कारण गेहूँ माना जाएगा। इसी व्यवस्था को वैशेषिक दर्शन (४/३) में कहा है- **कारणभावात् कार्यभावः**। इसी प्रकार इस सृष्टि का भी कोई-न-कोई कारण तो होगा ही। यह वैदिक सिद्धान्त आज का विज्ञान भी स्वीकार कर चुका है-Matter cannot created not it can be destroyed विज्ञानवेत्ताओं ने स्पष्ट घोषणा की है कि जहाँ Matterial Cause (उपादान कारण) नहीं होगा, वहाँ वस्तु की उत्पत्ति नहीं हो सकती। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने क्रान्तिकारी ग्रन्थ ''सत्यार्थ प्रकाश'' के अष्टम् समुल्लास में लिखा है-''साकार वस्तु से ही साकार वस्तु बनती है।'' सांख्यदर्शन १/४३ में भी लिखा है- **नावस्तुनो वस्तुसिद्धिः**, अर्थात् जो वस्तु कारण में नहीं है, वह कार्य में भी नहीं आ सकती। सांख्य दर्शन १/८३ में भी लिखा है-'कारणभावाच्च' अर्थात् कार्य का अस्तित्व कारण को छोड़कर पृथक् नहीं होता।

इसी सिद्धान्त का प्रतिपादन गीता के १२/१६ वें श्लोक में भी किया है-

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः।।

अर्थात् यदि कोई वस्तु वर्त्तमान नहीं है तो उसका वर्त्तमान (=उपस्थित) नहीं हो सकता तथा यदि उपस्थित है तो वह अनुपस्थित हो जाए, ऐसा नहीं हो सकता। इन दोनों तथ्यों का निर्णय तत्त्वदर्शियों अर्थात् प्रकृति तथा परमाणुओं का साक्षात्कार करने वाले विद्वानों ने किया है।

जगत् तथा वस्तु के कारण व कार्य को यदि हम सच्चाई व गहराई से जान लें तो संसार में प्रचलित अन्धविश्वासों व कथित चमत्कारों की पोल-पट्टी खुल सकती है। पहले हम जगत् के ३ कारणों को समझ लेते हैं, फिर चमत्कारों की पोलपट्टी खुलेगी। पहला कारण है- उपादान। उपादान का अर्थ है-जिसके बिना कुछ न बने। इसे अंग्रेजी में Matterial Cause वैज्ञानिकों ने स्वीकारा है। स्वर्ण से आभूषण बनते हैं। घड़ा मिट्टी से बनता है। रोटी आटे के बिना नहीं बनती। वस्त्र रुई से बनता है। ये सब उपादान कारण अर्थात् पदार्थ हैं, परन्तु यह भी सत्य है कि इनमें से कोई एक भी वस्तु अपने-आप बाल्टी नहीं बन सकता। स्वर्ण से आभूषण, मिट्टी से घड़ा, रुई से वस्त्र, आटे से रोटी तथा लोहे से रेल का पहिया, दरवाजा या बाल्टी अपने-आप नहीं बनती। इन्हें बनाने वाला कोई-न-कोई व्यक्ति अवश्य होना चाहिए। जिसके द्वारा बनाने से बने, वह दूसरा कारण है-निमित्त। इसे अंग्रेजी में आधुनिक वैज्ञानिकों ने Efficient Cause कहा है। स्वर्ण से आभूषण बनाने वाला स्वर्णकार निमित्त कारण है। मिट्टी से घड़ा बनाने वाला कुम्हार निमित्त कारण है। आटे से रोटी बनाने वाली हमारी माँ निमित्त कारण है। लोहे से बाल्टी या दरवाजा बनाने वाले को लोहार कहना होगा। तीसरा कारण साधारण कारण माना जाता है जिसे अंग्रेजी में आधुनिक वैज्ञानिकों ने Formal Cause नाम से अभिहित किया है। दुकान में स्वर्ण पड़ा हो, स्वर्णकार भी वहाँ उपस्थित हो तो क्या आभूषण बन जाएगा? हाथ, आँख, प्रकाश, काल व अग्नि आदि स्वर्णकार को अपेक्षित हैं। इनके बिना वह आभूषण नहीं बना सकता। घड़ा, बाल्टी, वस्त्र व रोटी आदि बनाने के लिए भी यही नियम लागू होता है। उपकरणों व प्रयोजनों का होना भी अनिवार्य है। आभूषण, रोटी, घड़ा व दरवाजा आदि किस काम आएंगे? किसके काम आएंगे, इनके प्रयोजन क्या हैं?

इस आधार पर यह संसार, यह सृष्टि या जगत् भी बिना कारण नहीं बन सकता था, न ही बिना कारण बना है। यह बनाया गया है, इसका सृजन किया गया है। इसीलिए इसे सृष्टि भी कहते हैं। यह अनित्य है। यह बनाई गई है। बनाने से पूर्व यह न थी। यह नित्य वस्तु प्रकृति से बनाई गई है। इसे अंग्रेजी में आधुनिक वैज्ञानिकों ने Matter

कहा है व स्वीकार किया है।

सृष्टि साकार है तो प्रकृति भी साकार है क्योंकि साकार वस्तु से ही साकार वस्तु उत्पन्न होगी। परमेश्वर क्योंकि निराकार है, अत: उससे सृष्टि या जगत् उत्पन्न हुआ, यह मानना सर्वथा असत्य है। सृष्टि प्रकृति से सृजित की गई। उसके बिना सृष्टि बन नहीं सकती थी। अत: प्रकृति उपादान कारण (Matterial Cause) है। वह जड़ पदार्थ है। अपने आप कुछ नहीं कर सकती। परमेश्वर सृष्टि का निमित्त कारण (Efficient Cause) है अर्थात् ईश्वर ने प्रकृति से सृष्टि या कहिए जगत् बनाया, परन्तु किस प्रयोजन तथा किन उपकरणों से सृष्टि या जगत् को बनाया? यह भी विचारणीय है। मिट्टी के अतिरिक्त चाक आदि सहायक कारण तथा घड़ा किस काम आएगा, किसके काम आएगा, इसका प्रयोजन क्या होगा–यह सब जानना भी आवश्यक है। स्पष्ट उत्तर यह है कि जो सृष्टि का भोग करता है अर्थात् जीव। यह सृष्टि उसी के लिए बनाई गई है। उसे Formal Cause अर्थात् साधारण कारण कहा जाता है। ईश्वर का ज्ञान, ईश्वर की शक्तियाँ आदि उपकरण भी साधारण कारण ही हैं।

इस विश्लेषण के विपरीत कुरान (मं. १/सि.१/सू. २ आ. ११७) के अनुसार खुदा ही आरम्भ में था। शेष कुछ भी न था। वह भूमि और आसमान को उत्पन्न करने वाला है तथा उसे कुछ करना नहीं पड़ता। वह जो कुछ करना चाहता है, वह कहता है= हो जा (=कुन) तो वह हो जाता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने ऐसा मानने वालों से पूछा है कि 'हो जा' वाला आदेश किसको दिया गया? किसने सुना? कौन–क्या बना? किस पदार्थ से बना? किसके लिए बना? जब यह मानते हो, कहते हो कि खुदा के सिवाय कोई वस्तु न थी तो यह विशाल–विस्तृत ब्रह्माण्ड बिना Matterial Cause अर्थात् उपादान करण के कैसे बन गया? तुम एक मक्खी की टाँग ही बनाकर दिखाओ। ईसाई भी बाईबल के अनुसार ऐसा ही मानते हैं तथा उनसे भी यही हमारे प्रश्न हैं। पौराणिकों का विचार यह है कि जैसे मकड़ी बाहर से कोई पदार्थ नहीं लेती, अपने शरीर में से ही तन्तु निकालकर जाला बना लेती है, ऐसे ही परमेश्वर अपने में से ही सृष्टि को बना लेता है। पौराणिकों /हिन्दुओं से हमारा निवेदन है कि मकड़ी अपने शरीर में उपस्थित जड़ प्रकृति से बने जड़ पदार्थों से जाला बनाती है। अपनी आत्मा से वह कुछ पदार्थ निकालकर कुछ नहीं बना सकती। साकार वस्तु साकार वस्तु से ही बनती है, यह बात पहले भी लिखी गई है। मकड़ी का आत्मा निराकार है तथा निराकार से साकार वस्तु बन ही नहीं सकती। मकड़ी की आत्मा निमित्त कारण है। उसका जड़ रूप शरीर तन्तु का उपादान कारण है।

इस सम्बन्ध में महर्षि कपिल का यह सूत्र विचारणीय है– **नावस्तुनो वस्तुसिद्धि:।** –सांख्यदर्शनम् १/४३

अर्थात् अवस्तु से वस्तु की सिद्धि नहीं होती। कार्यमात्र का आदान वस्तुभूत होना चाहिए।

पूर्वोक्त तीनों कारणों को समझ लें तो बहुत–से अन्धविश्वास, पाखण्ड व कथित चमत्कार समाप्त हो सकते हैं। मुझे स्मरण है कि सन् १९७२ में सत्य सांई बाबा अपना एक 'चमत्कारपूर्ण' प्रदर्शन करके घड़ियाँ, भस्म व अंगूठियाँ निकालकर बाँट देता था। दर्शक यही मानते थे कि यह बाबा अपनी अलौकिक सिद्धियों से ऐसा चमत्कार करता है। तभी कर्नाटक के एक विश्वविद्यालय के उपकुलपति ने उसे चुनौतीपूर्ण पत्र लिखा था–''आप मेरे यहाँ आकर रात्रि विश्राम करें। अगली प्रात: मेरे सामने स्नान करें तथा वस्त्र पहनें। तत्पश्चात् मैं आपको विश्वविद्यालय में ले चलूँगा। वहाँ विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों, प्राध्यापकों एवं अधिकारियों के समकक्ष अपना चमत्कारपूर्ण प्रदर्शन करके दिखाएँगे तो मैं भी आपका श्रद्धालु बन जाऊँगा।'' इसका कोई उत्तर बाबा ने नहीं दिया था तथा न ही फिर कोई कथित चमत्कार ही दिखाया। यदि वह उपकुलपति की इच्छानुसार प्रदर्शन करना मान जाता तो स्वत: सिद्ध हो जाना था कि वह अपने वस्त्रों के भीतर दाएँ–बाएँ कुछ घड़ियाँ, अगूँठियाँ व भस्म की पुड़ियाँ छिपाकर लाता था तथा वस्त्र को दबाने से घड़ियाँ आदि बाहर आ जाती थीं। दु:ख की बात यह है कि अधिकतर लोग यह नहीं सोचते कि बाबा के वस्त्रों के नीचे कोई कारखाना तो था नहीं, फिर घड़ियाँ कैसे बाहर निकल आती थीं। यदि ऐसे ही अगूठियाँ बन सकती हैं तो सभी स्वर्णकारों की दुकानें बन्द हो जानी चाहिएँ थीं। यदि स्वर्ण न हो, स्वर्णकार न हो

तथा उसके उपकरण व साधन न हों तो घड़ियाँ बन ही नहीं सकतीं, यह न सोचने वाले लोग ऐसे बाबाओं के शिष्य बनते हैं। ज्यों-ज्यों उक्त बाबा की पोल खुलती गई त्यों-त्यों अपने इस प्रकार के 'चमत्कार' दिखाने उसने बन्द कर दिए तथा वह अपने आश्रम तक ही सीमित होकर रह गया था, परन्तु दिव्य व अलौकिक शक्तियाँ प्राप्त कर लेने का दावा करने वाले बाबाओं की कमी अब भी नहीं है। बिना उपादान व साधारण कारणों के जब ईश्वर भी कुछ नहीं बना सकता तो, कोई मनुष्य कैसे ऐसा कर सकता है?

इस विषय में कुछ ऐसे ढोंगों का भण्डाफोड़ करना भी हमें अभीष्ट है, जो ढोंगी साधुओं द्वारा जनता को मूर्ख बनाकर धन ऐंठने के लिए किए-दिखाए जाते हैं। पहला ढोंग किसी बाबा द्वारा भभूत उत्पन्न करना है। वह बाबा राख, इत्र तथा चावल के मांड की गोलियाँ बनाकर उन्हें अंगूठे के बीच फंसाकर रखते हैं तथा कुशलतापूर्वक वायु में हाथ हिलाकर लोगों में बाँटते हैं व प्रभावित करते हैं। इसी प्रकार सिक्के या चित्र से भभूत पैदा करने के लिए ऐसे ढोंगी मरक्यूरस क्लोराइड का प्रयोग करते हैं। पहले से रसायन लगी अंगुलियों से जब ये लोग चित्रों को छूते हैं तो रासायनिक क्रिया से तस्वीर या सिक्के का अल्यूमीनियम राख में बदल जाता है।

कई ढोंगी साधु त्रिशूल को जीभ के आरपार करके दर्शकों को प्रभावित करते हैं। वस्तुत: उस त्रिशूल की बनावट में एक प्रकार का लूप होता है जिसे बाबा लोग कुशलता से छिपाकर जीभ में फँसा लेते हैं। इसी प्रकार कुछ बाबद बने ढोंगी साधु अपनी मन्त्र-शक्ति से स्वयं अग्नि हवनकुण्ड में अग्नि प्रज्वलित करने का दावा करते हैं। इसके लिए वे ग्लीसरीन को धोखे से घृत के रूप में प्रयोग करते हैं तथा लकड़ियों के नीचे पोटेशियम परमैगनेट रखा रहता है। जब इस पर हवा की जाती है तो ग्लीसरीन तथा पोटेशियम परमैगनेट की क्रिया से अग्नि प्रज्वलित स्वत: होती है। इस विषय में हम महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के १३ जुलाई १८७५ को पुणे में दिए एक उपदेश में से ये शब्द उद्धृत करना उचित समझते हैं-''मन्त्रों के कारण आग उत्पन्न होती थी, यदि ऐसा मानें तो मन्त्र बोलने वाला स्वयं क्यों नहीं जलता था?''

कुछ स्थानों पर तान्त्रिक भोले-भाले लोगों से धन उगाहने के उद्देश्य से उन पर भूत-प्रेत का साया बताते हैं तथा उनके मन में बैठे अन्धविश्वास का अनुचित लाभ उठाने के उद्देश्य से उन्हें भयाक्रान्त कर देते हैं। तत्पश्चात् भूत-प्रेत निकालने के नाम पर धन, चावल, नारियल तथा अन्य सामान मंगाते हैं। 'मन्त्र' पढ़ते हुए जब नारियल पर पानी फैंकते हैं, तो पहले से सोडियम अन्दर रखे नारियल में से सोडियम और पानी की क्रिया से आग लग जाती है, परन्तु 'साधु' लोग उस व्यक्ति के भूत-प्रेत या चुड़ैल को निकलाने का दावा करते हैं। मुस्लिम समुदाय के पीरों-फकीरों द्वारा अग्नि पर चलना बहुत प्रचलित है। वस्तुत: मानव शरीर बिना जले तथा बिना पीड़ा के एक सैकेण्ड के तीसरे हिस्से के तक आग सहन कर सकता है। इसी सिद्धान्त का लाभ लेते हुए ये फ़कीर जल्दी-जल्दी आग के शोलों पर पाँव रखते हुए आग को पार करते हैं। इससे उन्हें कोई परेशानी नहीं होती। इसी प्रकार कई 'साधु' अग्नि की लपटों को हाथ पर रखकर आरती करते हैं तथा बाद में उसे मुँह में डाल लेते हैं। सच्चाई यह है कि इसके लिए वे कपूर के बड़े टुकड़े का प्रयोग करते हैं। इसे जलाकर एक सैकण्ड में तीन बार जल्दी-जल्दी हाथ बदले रहने से न तो हाथ जलता है और उसे जब मुँह में रखा जाता है, तो लार मुँह को जलने से बचाता है। टुकड़ा बड़ा होने के कारण यह अंगारे के रूप में नज़र आता है। इसी सिद्धान्त के आधार पर कई 'साधु' मशाल से अग्निस्नान करते हैं।

खाली जग में पानी पैदा करने का भी एक चमत्कार कुछ लोग दिखाते हैं। इसका आधार यह है कि बर्तन में दो सतहों का होना है। बर्तन के तली में छेद होता है। उसे जब अंगुली से बन्द कर दिया जाता है, तो पानी गिरना बन्द हो जाता है। अंगुली हटा लेने पर पानी दोबारा आने लगता है। इसी विधि का प्रयोग करके केरल में कई 'साधु' लोगों के घरों का जल मन्त्र-शक्ति से आकाश मार्ग से 'स्वर्ग' में भेजते हैं तथा देवताओं को आदेश देकर उसे पृथ्वी पर लाकर भक्तों के दु:ख दूर करने का दावा करते हैं। इस प्रकार लोगों को मूर्ख बनाकर अपनी जेबें भरते हैं। इसी

प्रकार अस्सी/एक सौ किलोग्राम तक भार अंगुलियों की सहायता से उठाना भी भौतिकी के सिद्धान्त पर आधारित है। मध्यप्रदेश में विमल सागर जैन मुनि ने साड़ी के एक टुकड़े पर मिट्टी की परत रखकर हवन किया था। बाद में जब उसी साड़ी को निकाला गया तो वह जली बिल्कुल नहीं थी। उस साड़ी का एक-एक टुकड़ा पचास-पचास हजार रु. में भक्तों में बेचा गया था। सत्य यह है कि मिट्टी की परत आग की सारी गर्मी सोख लेती है। इस प्रकार उसके नीचे रखी गई साड़ी जली नहीं थी। एक अन्य चमत्कार में बालों के भीतर पानी सोखने वाले स्पंज का गोला रखकर जटाओं से सरलता से पानी निकाला जा सकता है।

ऐसे चमत्कार वस्तुत: ढोंगी लोगों के 'हाथों की सफाई' हैं। जादूगर ऐसे चमत्कार दिखाते फिरते हैं, परन्तु वे ईमानदारी से यह स्वीकारते हैं कि वे विज्ञान व प्राकृतिक व्यवस्था के विपरीत कुछ नहीं करते हैं जबकि दूसरे लोग स्वयं को अलौकिक सिद्धियाँ प्राप्त व्यक्ति घोषित करके दर्शकों को धोखा देते हैं व अन्धविश्वासों को बढ़ावा देते हैं। आवश्कयता है कि वैदिक सिद्धान्तों की तार्किक, दार्शनिक व विज्ञान के दृष्टिकोण से परख की जाए तथा सत्य को ही स्वीकार किया जाए।

इस बात का निश्चय है कि ब्रह्मचर्य्य, उत्तम शिक्षा, विद्या, शरीर और आत्मा का बल, आरोग्य, पुरुषार्थ, ऐश्वर्य, सज्जनों का संग, आलस्य का त्याग, यम-नियम और उत्तम सहाय्य के विना किसी मनुष्य से गृहाश्रम धारा जा नहीं सकता।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.३१

सब व्यवहार करने वालों को चाहिये कि जो मनुष्य जिस काम में चतुर हो उसको उसी काम में प्रवृत्त करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२०

जैसे पवन सब को सुख देता हुआ सब के रहने का स्थान हो रहा है वैसे ही विद्वान् को होना चाहिये।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.४१

एक आहुति
अपने आचार्य के लिए.....

ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा की तन, मन, धन से सेवा करने वाले, उसे अपनी मातृवत् समझने वाले और यहाँ तक कि अपना जीवन समर्पित कर देने वाले डॉ. धर्मवीर आज अपना समस्त भार आर्य जनता अर्थात् अपने उत्तराधिकारियों पर छोड़ गये हैं। उन्होंने ऋषि के स्वप्नों को अपना कर्त्तव्य समझकर सभा को गगनचुंबी ऊँचाइयों तक पहुँचाया। अनेक नये प्रकल्प चलाये यथा-वैदिक गुरुकुल, गौशाला, आश्रम, अतिथियों के ठहरने व खान-पान की नि:शुल्क व्यवस्था आदि। उन्होंने जो-जो कार्य छेड़े उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति में कभी न्यूनता न आने दी। परोपकारिणी सभा ऐसे पुत्र को प्राप्त कर गौरव का अनुभव करती है और बिछुड़कर शोकग्रस्त होने का भी। उनके द्वारा शुरु किये कार्य कभी शिथिल न पड़ें, इस कारण **सभा ने डॉ. धर्मवीर जी की स्मृति में एक करोड़ रु. की स्थिर निधि बनाने का संकल्प लिया है,** जिससे कि धन धर्म के काम आ सके। इसमें सन्देह नहीं कि ये समस्त कार्य आर्य जनता के सहयोग से ही प्रारम्भ हो सके हैं और सहयोग से ही चल भी रहे हैं। इसलिये इसमें भी सन्देह नहीं कि सभा के इस संकल्प को आर्य जनता शीघ्र पूर्णता की ओर पहुँचा देगी और शायद उससे भी कहीं बढ़कर। यज्ञ तो हवि माँगता है। बिना हवि के यज्ञ की कल्पना भी क्या? बस देरी तो सूचित होने की है। हवि बनना तो आर्यों के खून में है, तन से, मन से अथवा धन से।

आप अपना दान चैक, ड्राफ्ट या सभा के खाते में सीधे भी भेज सकते हैं। कृपया, राशि भेजने के पश्चात् सभा में दूरभाष या पत्र द्वारा अवश्य सूचित कर दें।

- मन्त्री

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ– प्रवचन, वेद–पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***– आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***– अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्णरूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***– गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***– वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***– इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोधकर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***– योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों में भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी–छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१ से १५ अक्टूबर २०१७ तक)

१. श्री अभयदेव, गाजियाबाद २. श्री दीक्षेश शर्मा, अजमेर ३. श्री हर्षवर्धन, गाजियाबाद ४. श्री हरगोपाल, जयपुर ५. श्री आनन्द पाण्डे, भोपाल ६. श्री विजय गहलोत एवं श्रीमती कंचन गहलोत, ऋषि उद्यान, अजमेर ७. श्री हरि साहू पहाड़ी, भरतपुर ८. श्रीमती सरला मेहता, अजमेर ९. श्री हरिओम रस्तोगी, बरेली १०. श्री सुधीर कुमार साहनी, नासिक ११. श्री अमिताभ त्रिपाठी, अजमेर १२. डॉ. रमाकान्त पारीक, जयपुर १३. श्री सुभाष कथूरिया, हिसार १४. श्री रामपाल सिंह, नांगलोई दिल्ली १५. श्री जगमोहन लाल आहूजा, मेरठ १६. श्री राजकुमार गुप्ता १७. श्रीमती सुदेश कुमारी, करनाल १८. श्री संजय जाखड़, हनुमानगढ़ १९. श्री राजीव सिंह, सोनीपत २०. श्री सूरजभान, सोनीपत २१. श्री सतपाल आर्य, करनाल २२. श्री हेमन्त कुमार शर्मा, भरतपुर २३. श्री नीरज, चण्डीगढ़ २४. श्री श्याम सुन्दर शर्मा, अजमेर २५. श्री मनोहरदास आर्य, नागौर २६. श्री प्रवीण चन्द्रकांत आर्य, जूनागढ़ २७. श्री महेन्द्र चौहान, अजमेर २८. श्री अजय कुमार श्रीवास्तव, लखनऊ २९. श्री किशन सिंह गहलोत, अजमेर ३०. श्री बी. कृपाकर रेड्डी, सिकन्दराबाद ३१. श्री सुशील शर्मा, अजमेर। **– परोपकारिणी सभा, अजमेर।**

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गो-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१६ से ३० सितम्बर २०१७ तक)

१. श्री अनुज आर्य, चरखी दादरी २. श्री लहरी सिंह आर्य, सहारनपुर ३. श्री शमशेर सिंह, दिल्ली ४. श्री विजय सिंह गहलोत व श्रीमती कंचन गहलोत, ऋषि उद्यान अजमेर ५. श्री प्रणव भट्टाचार्य, हावड़ा ६. श्रीमती सरला मेहता, अजमेर ७. श्री आनन्द मुनि, हिसार ८. डॉ. नन्दकिशोर काबरा, ऋषि उद्यान, अजमेर ९. श्री रमेश मुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर १०. श्रीमती पुष्पलता उपाध्याय, अजमेर ११. श्री तिलकराज, नई दिल्ली १२. स्वामी केवलानन्द, ज्वालापुर १३. श्रीमती शैलजा आर्य, लखनऊ १४. श्रीमती विजयलक्ष्मी, बसई ईस्ट, महाराष्ट्र १५. श्री श्याम, अजमेर १६. श्री टी. राजेश्वर बोधन, निजामाबाद १७. श्रीमती सुशीला देवी आर्य, बिहार १८. श्रीमती पुष्पा शर्मा, अलीगढ़ १९. श्रीमती चन्द्रावती देवी, अलीगढ़ २०. श्री गणपतलाल शर्मा, जोधपुर २१. श्रीमती वीणा जोशी, गुजरात २२. श्री मामराज, करनाल २३. श्रीमती सुदेश कुमारी, करनाल २४. श्री संजय जाखड़, हनुमानगढ़ २५. श्री शिवपाल चौधरी, भीलवाड़ा २६. श्री महीपाल व आदित्य, भीलवाड़ा २७. श्री प्रभुलाल कुमावत, किशनगढ़, अजमेर २८. श्रीमती वीणा सहगल, पंचकुला २९. श्री श्याम सुन्दर शर्मा, अजमेर ३०. श्री रामरतन विजयवर्गीय, अजमेर ३१. श्री बाबूलाल जोशी, इन्दौर ३२. श्री अरुण गौड़, अजमेर ३३. श्री मुकेश सिंघल, जयपुर। **– परोपकारिणी सभा, अजमेर।**

अग्नि और जल संसार के सब व्यवहारों के कारण हैं, इस से गृहस्थजन विशेष कर अग्नि और जल के गुणों को जानें और गृहस्थ के सब काम सत्य व्यवहार से करें। **– महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२४**

जब तक मनुष्य सुख-दु:ख, हानि और लाभ की व्यवस्था में परस्पर अपने आत्मा के तुल्य दूसरे को न जानते तब तक पूर्ण सुख को प्राप्त नहीं होते, इससे मनुष्य लोग श्रेष्ठ व्यवहार ही किया करें। **–महर्षि दयानन्द, यजु.,भा ५.४०**

पति-पत्नी का आपसी सम्बन्ध-अथर्ववेद

शिवनारायण उपाध्याय

गृहस्थ-आश्रम की गाड़ी ठीक तरह से तभी चल पाती है जब घर में पति-पत्नी आपस में मिलकर एक-दूसरे से प्रीति करने वाले हों। दोनों एक-दूसरे की भावना को समझने का प्रयत्न करें और उसका सम्मान भी करें। इसके लिए सबसे पहले इस बात का ध्यान रखा जाए कि दोनों पूर्ण रूप से शिक्षित हों, उनकी आयु में भी बहुत अन्तर न हो और न बाल्य अवस्था में विवाह हो। अथर्ववेद में काण्ड १२, सूक्त ३ एवं काण्ड १४, सूक्त १ व २ में इस विषय का पर्याप्त वर्णन हुआ है, दूसरे काण्डों में भी इस विषय में बहुत कुछ कहा गया है, परन्तु हम इस लेख में केवल इन्हीं दो काण्डों के आधार पर इस विषय पर वेद का विचार जानने का प्रयत्न करेंगे।

विवाह शिक्षा समाप्ति के पूर्व नहीं होना चाहिए।

स्तोमा आसन् प्रतिधयः कुरीरं छन्द ओपशः।
सूर्याया अश्विना वराग्निरासीत्पुरोगवः।।

अथर्व. १४.१.८

पदार्थ- (स्तोमाः) स्तुति योग्य गुण (सूर्यायाः) प्रेरणा करने वाली कन्या के (प्रतिधयः) वस्त्रों के अंचल (समान आसन्) हों। (कुरीरम्) कर्त्तव्य कर्म और (छन्दः) आनन्दप्रद वेद (ओपशः) मुकुट समान हों और (अग्निः) अग्नि (शारीरिक) (पुरोगवः) अग्रगामी (आसीत्) हों जबकि (अश्विना) विद्या को प्राप्त दोनों (पति-पत्नी) (वरा) परस्पर चाहने वाले हों।

भावार्थ-जब कन्या ब्रह्मचर्य का निर्वाह करती हुई शिक्षा प्राप्त कर ले और शारीरिक दृष्टि से भी निरोग हो तब अपने समान विद्या प्राप्त स्वस्थ ब्रह्मचारी से विवाह करे।

सोमो वधूयुरभवदश्विनास्तामुभा वरा।
सूर्यां यत्पत्ये शंसन्तीं मनसा सविताददात्।।

अथर्व. १४.१.९

पदार्थ- (सोमः) शुभ गुण संयुक्त ब्रह्मचारी (वधूयुः) वधू की कामना करने वाला (अभवत्) हो (उभा) दोनों (अश्विना) विद्या को प्राप्त (वरा) परस्पर चाहने वाले (आस्ताम्) हों, (यत्) जब (पत्ये) पति के लिए (मनसा) मन से (संशन्तीम्) गुण कीर्तन करती हुई (सूर्याम्) प्रेरणा करने वाली कन्या को (सविता) जगत् का उत्पादक परमात्मा (अददात्) देवे।

भावार्थ- ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणी अपनी विद्या समाप्त करने के बाद परस्पर गुणों की परीक्षा करके गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करें और परमेश्वर को धन्यवाद देवे क्योंकि बड़े भाग्य से तुल्य गुण, कर्म और स्वभाव वाले स्त्री-पुरुषों का जोड़ा मिलता है।

पति-पत्नी को चाहिए कि आपस में प्रेम व्यवहार करें।

प्रेतो मुञ्चामि नामुतः सुबद्धाममुतस्करम्।
यथेयमिन्द्र मीढ्वः सुपुत्रा सुभगासति।।

अथर्व १४.१.१८

पदार्थ- इस (वियोगपाश) से (इस वधु को) (प्र मुञ्चामि) मैं वर, अच्छे प्रकार छुड़ाता हूँ, (अमृतः) उस प्रेम पाश से (न) नहीं छुड़ाता, (अमृतः) उस प्रेम पाश में (इस वधु) को (सुबद्धाम) अच्छे बन्धनयुक्त (करम्) मैं करता हूँ। (यथा) जिससे (मीढ्वः) हे सुख की वर्षा करने वाले (इन्द्र) परम ऐश्वर्य वाले परमात्मा! (इयम्) यह वधु (सुपुत्रा) सुन्दर पुत्रों वाली और (सुभगा) बड़े ऐश्वर्य वाली (असति) होवे। स्त्री को कर्म-कुशल होना चाहिये और धन का सदुपयोग करना भी आना चाहिए। इन गुणों के कारण वह पति की अत्यन्त प्रिय बन जाती है।

नीललोहितं भवति कृत्यासक्तिर्व्यज्यते।
एधन्ते अस्या ज्ञातयः पतिर्बन्धेषु बध्यते।।

अथर्व १४.१.२६

पदार्थ- (नीललोहितम्) निधियों का प्रकाश (भवति) होता है, जबकि (कृत्या) कर्त्तव्यकुशल पत्नी की (आसक्ति) प्रीति (वि अज्यते) प्रसिद्ध होती है। (अस्याः) इस पत्नी के (ज्ञातयः) कुटुम्बी लोग (एधन्ते) बढ़ते हैं। और (पतिः) पति, (बन्धेषु) पत्नी के प्रेम के बन्धन में (बध्यते) बंध जाता है।

भावार्थ- जिस प्रकार परिवार में कर्म-कुशल बुद्धिमान् स्त्री धन का हानि-लाभ विचारकर कर्त्तव्य करती है। वहाँ धन सम्पत्ति बढ़ती है। पति उससे हार्दिक प्रीति करने लगता है।

पति-पत्नी के मध्य मतभेद नहीं होना चाहिए। उन्हें सदैव एकमत होकर ही कार्य करना चाहिये। इससे घर में शान्ति स्थापित होती है।

यद्यज्जाया पचति त्वत् परः परः पतिर्वा जाये त्वत् तिरः।
सं तत् सृजेथां सह वां तदस्तु संपादयन्तौ सह लोकमेकम्।

अथर्व १२.३.३९

पदार्थ- (हे पति) (यद्यत्) जो कुछ वस्तु (जाया) पत्नी (त्वत्) तुझ से (परः परः) अलग-अलग (पचति) पकाती है, (वा) अथवा (जाये) हे पत्नी! (पतिः) पति (त्वत्) तुझसे (तिरः) गुप्त-गुप्त, चुपके-चुपके (कुछ पकाता है।) (एकम्) एक (लोकम्) घर को (सह) मिलकर (सम्पादयन्तौ) बनाते हुए तुम दोनों (तत्) उस गृह-कार्य को (सं सृजेथाम्) मिलाओ, (तत्) वह गृह-कर्म (वाम्) तुम दोनों का (सह) मिलकर (अस्तु) होवे।

भावार्थ- पति-पत्नी के बीच में कोई दुराव-छिपाव नहीं होना चाहिए। दोनों मिलकर ही सदा एकमत होकर ही गृह-कार्य करें।

पति-पत्नी के बीच असभ्य भाषण कभी भी नहीं होना चाहिए।

यदक्षेषु वदा यत् समित्यां यद्वा वदा अनृतं वित्तकाम्या।
समानं तन्तुमभि संवसानौ तस्मिन्त्सर्वं शमलं सादयाथः।।

अथर्व १२.३.५२

पदार्थ- (हे स्त्री वा पुरुष)! (यत्) जो कुछ (झूठ)(अक्षेषु) अभियोगों (राजगृह के विवादों) में (अथवा) (यत्) जो कुछ (झूठ) (समित्याम्) संग्राम में (वदाः) तू बोले, (वा) अथवा (यत्) जो कुछ (अनृतम्) झूठ (वित्तकाम्या) धन की कामना से (वदाः) तू बोले, (समानम्) एक ही (तन्तुम् अभि) तन्तु (वस्त्र) में (संवसानौ) ढके हुए तुम दोनों (पति-पत्नी) (तस्मिन्) उस झूठ में (सर्वम्) सब (शामलम्) भ्रष्ट-कर्म को (सादयाथः) स्थापित करोगे।

भावार्थ- सब स्त्री-पुरुषों के लिए आवश्यक है कि दोनों एक-दूसरे को अपने समान समझकर कठिन से कठिन आपत्ति में भी असत्य न बोले। असत्य बोलना ही सब विवादों का मूल है।

स्त्री-पुरुष सदैव शुभ काम करें, अज्ञान को दूर करें और शुभ गुणों को जीवन में धारण करें।

वर्षं वनुष्वापि गच्छ देवांस्त्वचो धूमं पर्युत्पातयासि।
विश्वव्यचा घृतपृष्ठो भविष्यन्त्सयोनिर्लोकमुप याह्येतम्।।

अथर्व १२.३.५३

पदार्थ- (हे पुरुष) तू (वर्षम्) वरणीय (श्रेष्ठ) कर्म का (वनुष्व) सेवन कर, (देवान्) कामना योग्य गुणों को (अपि) अवश्य (गच्छ) प्राप्त हो, (त्वचः) अपनी खाल (देह) से (धूमम्) धुएँ (मैल) को (परि) सब ओर (उत् पातयासी) उड़ा दे। (विश्वव्यचाः) सब व्यवहारों में फैला हुआ (घृतपृष्ठः) प्रकाश से सींचता हुआ और (सयोनिः) समान घर वाला (भविष्यन्) भविष्यत् में होता हुआ तू (एतम्) इस (लोकम्) लोक में (उप याहि) पहुँच।

भावार्थ- सब स्त्री पुरुषों को चाहिये कि वे सदैव श्रेष्ठ गुणों को अपने में धारण करें। अपने ऊपर किसी प्रकार का कलंक न लगा लें। यदि कभी अज्ञानवश, कोई भूल से असत्य कार्य हो जावे तो स्वीकार कर प्रायश्चित्त कर लें।

स्त्री पुरुषों को चाहिये कि सदैव संसार के बीच विद्वानों के मार्ग से चलकर, धर्म-मर्यादा का पालन करते रहें।

समस्मिन्ल्लोके समु देवयाने सं स्मा समेतं यमराज्येषु।
पूतौ पवित्रैरुप तद्धवयेथां यद्यद्रेतो अधि वां संबभूव।।

अथर्व १२.३.३

पदार्थ- (अस्मिन् लोके) इस लोक (संसार वा जन्म) में (सम्) मिलकर (देवयाने) विद्वानों के मार्ग में (उ) ही (सम्) मिलकर (यमराज्येषु) न्यायाधीश (परमात्मा) के राज्यों (राज्य नियमो) में (सम रूप) अवश्य मिलकर (समेतम्) तुम दोनों साथ-साथ चलो। (पवित्रैः) पवित्र कर्मों से (पूतौ) पवित्र तुम दोनों (तत्) उस बल को (उप तद्धवयेथां) आदर से बुलाओ (यद्यत्) जो-जो (रेतः) वीर्य (बल) (वाम् अधि) तुम दोनों में अधिकारपूर्वक (संबभूव) उत्पन्न हुआ है।

भावार्थ- स्त्री पुरुषों को चाहिए कि संसार के बीच

विद्वानों के मार्ग से परमात्मा के नियमों में चलकर धार्मिक व्यवहार से दोनों मिलकर उस सामर्थ्य का प्रकाश करें जो उन्होंने ब्रह्मचर्य से पाया है।

पति-पत्नी को चाहिये कि जैसे उनके माता-पिता ने कोई पाप कर्म नहीं किया है और न ही कोई असत्य आचरण किया है वैसे वे भी करें।

यं वा पिता पचति यं च माता रिप्रान्निर्मुक्त्यै शमलाच्च वाचः।
स ओदनः शतधारः स्वर्ग उभे व्याप नभसी महित्वा।।

अथर्व १२.३.५

पदार्थ- (यम्) जिस (परमेश्वर) को (वाम्) तुम दोनों का (पिता) पिता (च) और (यम्) जिसको (माता) तुम्हारी माता (रिप्रात्) पाप से (च) और (शमलात्) भ्रष्ट व्यवहार से (निर्मुक्त्यै) छूटने के लिए (वाचः) अपनी वाणियों द्वारा (पचति) पक्का (दृढ़) कर ली है। (सः) वह (शतधारः) सैकड़ों धारण शक्तियों वाला (स्वर्गः) सुख पहुँचाने वाला (ओदनः) ओदन (सुख बरसाने वाला परमेश्वर) (महित्वा) अपने महत्त्व से (उभे) दोनों (नभसी) सूर्य और पृथ्वी (प्रकाशमान और अप्रकाशमान) लोको में (वि आप) व्यापक हुआ है।

भावार्थ- हे स्त्री-पुरुषो! जैसे तुम्हारे माता-पिता ने पाप से छूटने के लिए अपनी वाणिओं द्वारा परमात्मा का साक्षात् किया है वैसा ही तुम भी करो।

स्त्री-पुरुषों को उचित है कि विद्वानों के समान परमात्मा के द्वारा रचे गए पदार्थों से यथावत् लाभ लें।

उभे नभसी उभयांश्च लोकान् ये यज्वनामभिजिताः स्वर्गाः।
तेषां ज्योतिष्मान् मधुमान् यो अग्रे तस्मिन् पुत्रैर्जरसि सं श्रयेथाम्।।

अथर्व. १२.३.६

पदार्थ- (ये) जो लोका (यज्वनाम) यज्ञ करने वालों को (अभिजिताः) सब ओर से जीते हुए और (स्वर्गाः) सुख पहुँचाने वाले हैं (तेषाम्) उन लोकों के मध्य (यः) जो (परमेश्वर) (अग्ने) पहिले से (ज्योतिष्मान्) प्रकाशमय और (मधुमान्) ज्ञानमय है, (तस्मिन्) उस (परमेश्वर) में (वर्तमान) (उभे) दोनों (नभसी) सूर्य और पृथ्वी (प्रकाशित और अप्रकाशित) लोकों को (च) और (उभयान्) दोनों (स्त्री-पुरुष) समूह वाले (लोकान्) लोकों को (पुत्रैः) अपने पुत्रों के साथ (जरसि) स्तुति में रहकर (संश्रयेथाम्) तुम दोनों (स्त्री-पुरुष) मिलकर सेवन करो।

भावार्थ- स्त्री-पुरुषों को चाहिये कि परमात्मा द्वारा रचित पदार्थों का उचित उपयोग करें और अपनी सन्तानों के साथ यशस्वी बनकर आनन्द भोगें।

यद्यत् कृष्णः शकुन एह गत्वात्सरन् विषक्तं बिल आससाद।
यद्वा दास्या३र्द्रहस्ता समङ्क्त उलूखलं मुसलं शुम्भतापः।

अथर्व. १२.३.१३

पदार्थ- (यद्यत्) जब कभी (कृष्णः) कुरेदने वाला (शकुनः) चील आदि समान दुष्ट पुरुष (इह) यहाँ (आगत्वा) आकर (विषक्तम्) विष से (त्सरन्) टेढ़ा चलता हुआ (बिले) बिल में हमारे घर आदि में (आससाद) आया है। (वा) अथवा (यत्) यदि (आर्द्रहस्ता) भीगे हाथ वाली (दासी) हिंसक स्त्री (उलूखलम्) ओखली और (मुसलम्) मूसल को (समङ्क्ते) लिथेड़ देती है, (आपः) हे आप्त प्रजाओ! (उस दोष को) (शुम्भत) नाश कर दो।

भावार्थ- यदि कोई कपटी पुरुष अथवा कोई दुष्ट स्त्री हमारे व्यवहारों में अथवा हमारे घर के बरतनों, वस्त्र आदि में बखेड़ा डाले तो विद्वान् स्त्री-पुरुष उस दोष का प्रतीकार करें।

मनुष्य सदैव सत्सङ्ग में रहकर अपने घर को स्वर्ग बनाएँ।

स्वर्गं लोकमभि नो नयासि सं जायया सह पुत्रैः स्याम।
गृहणामि हस्तमनु मैत्वत्र मा नस्तारीन्निर्ऋतिर्मो अरातिः।।

अथर्व. १२.३.१७

पदार्थ- (हे विद्वन्) (स्वर्गम्) सुख पहुँचाने वाले (लोकम् अभि) समाज में (नः) हमको (नयासि) तू पहुँचा। हम (जायया) पत्नी के साथ और (पुत्रैः सह) पुत्रों के साथ (सुस्याम) मिले रहें। मैं (प्रत्येक मनुष्य)(हस्तम्) हाथ (गृहणामि) पकड़ता हूँ, वह (अत्र) यहाँ (मा अनु) मेरे साथ-साथ (आ एतु) आवे। (नः) हमको (मा) न तो (निर्ऋतिः) अलक्ष्मी (दरिद्रता) (मो) और न (अराति) कंजूसी (तारीत्) दबावे।

भावार्थ- मनुष्य विद्वानों के साथ रहें। सत्संग का लाभ लें। पति-पत्नी और सन्तान सब मिलकर दुःख से दूर रहें। इससे उसे न तो दरिद्रता सता सकेगी और न वह

कंजूस बनेगा।

पति-पत्नी को सदैव ईश्वर-विश्वासी बनकर गृहस्थ आश्रम को सफल बनाना चाहिये।

उतेव प्रभ्वीरुत संमितास उत शुक्राः शुचयश्चामृतासः।
ता ओदनं दंपतिभ्यां प्रशिष्टा आपः शिक्षन्तीः पचता सुनाथाः।

अथर्व. १२.३.२७

पदार्थ- (उत इव) और जैसी (प्रभ्वी:) प्रबल (उत) और (संमितास:) सम्मान की गई (च) और (शुक्रा:) वीर्य वाली (शुचय:) शुद्ध आचरण वाली (च) और (अमृतास:) अमर (सदा पुरुषार्थ युक्त) (प्रशिष्टा:) बड़ी शिष्ट (शिक्षन्ती:) उपकार करती हुई (ता:) वे तुम सब (आप:) हे आप्त प्रजाओ! (सुनाथा:) हे बड़ी ऐश्वर्यवालियो! (दम्पतिभ्याम्) दोनों पति-पत्नी के लिए (ओदनम्) सुख बरसाने वाले (परमेश्वर) को (पचत) हृदय में दृढ़ करो।

भावार्थ- मनुष्यों को उचित है कि चाहे कोई सन्तान विवाह विधि से हुई हो अथवा नियोग द्वारा हुई हो, दाय भाग में सम्मिलित करें।

यावन्तो अस्याः पृथिवीं सचन्ते अस्मत् पुत्राः परि ये संबभूवुः।
सर्वांस्ताँ उप पात्रे ह्वयेथां नाभिं जानानाः शिशवः समायान्।।

अथर्व. १२.३.४०

पदार्थ- (अस्या:) इस पत्नी के (यावन्त:) जितने (पुत्रा:) पुत्र (पृथिवीम्) पृथ्वी को (सचन्ते) सेवते हैं और (ये) जो (पुत्र) (अस्मत् परि) हम से पृथक् (संबभूवु:) उत्पन्न हुए हैं। (तान्) उन (सर्वान्) सबको (पात्रे) रक्षणीय व्यवहार में (उपह्वयेथाम्) तुम दोनों निकट बुलाओ (नाभिम्) बन्धु धर्म (जानाना:) जानते हुए (शिशव:) बालक (समायान) मिलकर रहें। इति शम्।

जब तक सबकी रक्षा करने वाला धार्मिक राजा वा आप्त विद्वान् न हो तब तक विद्या और मोक्ष के साधनों को निर्विघ्नता से पाने के योग्य कोई भी मनुष्य नहीं होता है और न मोक्षसुख से अधिक कोई सुख है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५२

जो विद्या की वृद्धि के लिए पठन-पाठन रूप यज्ञ कर्म्म करने वाला मनुष्य है वह अपने यज्ञ के अनुष्ठान से सब की पुष्टि तथा संतोष करने वाला होता है इससे ऐसा प्रयत्न सब मनुष्यों को करना उचित है। **-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.२७**

परोपकारी के पाठकों के लिए एक विशेष भेंट

साहित्य पिता पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय रचित पहली प्रकाशित कविता

राजेन्द्र जिज्ञासु

हमें अपनी नवीनतम खोज पूज्य उपाध्याय जी की प्रथम प्रकाशित कविता परोपकारी के पाठकों को भेंट करते हुये हार्दिक आनन्द की अनुभूति हो रही है। आर्यजगत् में कोई भी नहीं जानता कि आप कभी 'मकसद' उपनाम से कवितायें लिखा करते थे। यह कविता 'आर्यपत्र' बरेली के जुलाई १९०३ के अंक में पृष्ठ चौदह पर छपी थी। स्वामी सत्यप्रकाश जी के जन्म से दो वर्ष पहले इस कविता का आविर्भाव हुआ था।

आस्तिकवाद के लेखक के अटल ईश्वर विश्वास का एक-एक पंक्ति से परिचय मिलता है।

'जिज्ञासु'

यह ओ खुर[१] में तेरी ज़िया[२] देखते हैं।
नहीं देख सकते तुझे तीरः बातन[३],
मगर तुझको अहले सफ़ा[४] देखते हैं।
पड़ी है भंवर में जो किश्ती हमारी,
नहीं जुज़[५] ख़ुदा नाख़ुदा[६] देखते हैं।।
फ़कत[७] तू ही राज़िक[८] है सारे जहाँ का,
तेरे दर का सबको गदा[९] देखते हैं।।
रहे ज़िन्दगानी[१०] में गुमराह होकर,
तेरी राह अय रहनुमा[११] देखते हैं।।
शरण किसकी लें किसका लें हम सहारा,
किसी को न तेरे सिवा देखते हैं।।
अगर तू नहीं हर चमन में ख़ुदाया[१२],
तो हर एक गुल[१३] क्यों खिला देखते हैं।।
नहीं कोई 'मकसद'[१४] का दुनिया में हामी,
मगर तेरा हम आसरा देखते हैं।।

टिप्पणी

१. चन्द्र, सूर्य २. ज्योति ३. अज्ञानी हृदय, ४. पवित्र हृदय ५. सिवा ६. नाविक ७. केवल ८. अन्नदाता ९. भिक्षु १०. जीवन पथ पर ११. पथ प्रदर्शक १२. हे प्रभु १३. पुष्प १४. उद्देश्य-लक्ष्य-कवि का उपनाम था/आगे चलकर उपनाम का कभी प्रयोग नहीं किया

मूर्तिपूजा का मतलब है-'उल्टी गंगा बहाना'

जगदीश प्रसाद शर्मा

ईश्वर की स्तुति हेतु संस्कृत का लोक-प्रचलित एक सुप्रसिद्ध श्लोक निम्नानुसार है-

त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणम् त्वमेव त्वमेव सर्वम् मम देव देव।।

अर्थात्- ''हे ईश्वर! तुम ही मेरी माता हो, तुम ही मेरे पिता हो, तुम ही मेरे भाई-बन्धु हो, तुम ही मेरे मित्र हो, तुम ही मेरी विद्या हो, तुम ही मेरे धन हो और तुम ही मेरे सब देवों के देवता हो, यानि तुम ही मेरे सब कुछ हो।''

इस श्लोक से स्पष्ट है कि ईश्वर को हम लोग माता-पिता मानते हैं अर्थात् हम उनके बेटा-बेटी हैं। इस रिश्ते के कारण ईश्वर, मूर्तियों एवं चित्रों की पूजा और मन्दिरों के सम्बन्ध में जो बातें उभरकर आती हैं, वे निम्नानुसार हैं-

१. माता-पिता दुनिया में पहले आते हैं और बेटा-बेटी बाद में आते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि माता-पिता होने के कारण ईश्वर मनुष्य के पैदा होने (सृजन) के पहले से ही इस दुनिया में उपस्थित है।

२. दुनिया में हर दिन और हर पल लोग मरते रहते हैं एवं जन्म लेते रहते हैं। माता-पिता होने के कारण बेटा-बेटी (मनुष्य) के पैदा होते रहने की दुनिया में व्यवस्था बनाये रखने के लिये ईश्वर का हमेशा जीवित रहना आवश्यक है। जब तक संसार है तब तक मनुष्य का जन्म होना जारी रहेगा और इसके लिये तब तक तो निश्चित ही ईश्वर भी नहीं मरेगा।

३. मनुष्य के पैदा होने पर उसके लालन-पालन की व्यवस्था करने और कर्मों के अनुसार फल देने के लिये ईश्वर हमेशा उपलब्ध रहते हैं।

४. प्रलय के बाद दुनिया (प्रकृति) को फिर से बनाने एवं उसे चलाने के लिये ईश्वर का जीवित रहना आवश्यक है।

५. सृजन, संचालन और प्रलय का यह क्रम निरन्तर चलता रहता है। अत: सृष्टि के सृजन, संचालन और प्रलय के लिये ईश्वर हमेशा जीवित रहता है अर्थात् ईश्वर शाश्वत है। जो कभी नहीं मरता (अमर है) वह कभी बूढ़ा भी नहीं होता (अजर है)। इसीलिये ईश्वर अजर-अमर है।

६. मूर्तिपूजक लोग बेजान वस्तु से बनी मूर्ति और चित्र को ईश्वर मानकर पूजते हैं। मूर्ति और चित्र तो शिल्पकार और चित्रकार द्वारा ही बनाये जाते हैं। शिल्पकार और चित्रकार मनुष्य होते हैं। पैदा होने के बाद खुद मनुष्य द्वारा बनाई गईं (पैदा की गईं) मूर्तियाँ और चित्र मनुष्य की कृतियाँ हैं, जिन्हें उसके बेटा-बेटी की उपमा देना तो युक्तिसंगत होने से ठीक है लेकिन माता-पिता की उपमा कतई नहीं दी जा सकती। अत: सबके माता-पिता ईश्वर मूर्ति और चित्र के रूप में नहीं हो सकते।

७. बनाने वाला बनाई गई वस्तु से बड़ा होता है। इस तर्क के आधार पर मनुष्य द्वारा बनाई गई मूर्ति और चित्र से मनुष्य ही बड़ा है। इसीलिये महान् मूर्तिकारों और चित्रकारों को ही पुरस्कार देकर सम्मानित किया जाता है न कि उसके द्वारा निर्मित मूर्तियों और चित्रों को। मनुष्य को बनाने वाला ईश्वर मनुष्य से बड़ा है। इस तरह ईश्वर मनुष्य से बड़ा तथा मनुष्य मूर्ति और चित्र से बड़ा है। अत: मनुष्य द्वारा बनाई गई मूर्तियाँ और चित्र भगवान् नहीं हैं।

मूर्ति-पूजा के पक्षधर लोग प्राय: दो बातें कहते हैं- पहली तो यह कि ईश्वर से मिलने के लिये मूर्ति-पूजा पहली सीढ़ी है और दूसरी यह कि ईश्वर की पूजा का कोई न कोई आधार (प्रतीक) तो होना ही चाहिये। अब प्रश्न यह पैदा होता है कि पहली सीढ़ी मानकर पूरी जिन्दगी मूर्ति-पूजा ही करते रहे तो दूसरी सीढ़ी कब चढ़ेंगे? पहली कक्षा में ही अपने पूरे जीवन को लगाने वाले क्या कभी दूसरी, तीसरी, चौथी आदि आगे की कक्षाओं में पहुँचकर आगे की पढ़ाई कर सकेगें? निश्चित ही नहीं। आज तक ऐसा कोई व्यक्ति नहीं हुआ, जिसने मूर्ति-पूजा करते-करते ज्ञान पाकर इस प्रथम सीढ़ी मूर्ति-पूजा को छोड़कर ईश्वर का सान्निध्य प्राप्त कर लिया हो। योग के आठ अंग हैं-यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। केवल ये ही हैं वे आठ सीढ़ियां, जिनसे ईश्वर को पाया जा सकता है। इन आठ सीढ़ियों में मूर्ति-

पूजा सम्मिलित नहीं है।

ईश्वर निराकार है, निराकार होने के कारण जब ईश्वर को किसी शिल्पकार और चित्रकार ने देखा ही नहीं तो शिल्पकार और चित्रकार द्वारा उसकी मूर्ति और चित्र बनाये ही नहीं जा सकते। अत: ईश्वर की काल्पनिक प्रतिमा (मूर्ति और चित्र) बनाकर उसे पूजना और प्रथम सीढ़ी मानकर उसमें ध्यान लगाना ईश्वर की उपासना नहीं है, बल्कि अज्ञानता एवं शुद्ध पाखण्ड ही है।

समाज में प्रचलित प्रथा के अनुसार किसी जीवित व्यक्ति की मूर्ति और चित्र पर पुष्प अर्पित करके उसकी पूजा नहीं की जाती, परन्तु मृत्यु होने पर व्यक्ति के चित्र और मूर्ति पर पुष्प और फूल माला आदि चढ़ाये जाते हैं। अत: हमेशा जीवित रहने वाले शाश्वत (अजर-अमर) परमात्मा की मूर्ति और चित्र बनाकर उसकी पूजा की ही नहीं जा सकती। ईश्वर की मूर्ति और चित्र पर फूल आदि चढ़ाने का तात्पर्य यह है कि मूर्तिपूजक लोग शाश्वत (अजर-अमर) एवं निराकार ईश्वर को मरा हुआ समझते हैं। मरा हुआ ईश्वर किसी को भी कुछ नहीं दे सकता। इस कारण मूर्तियों और चित्रों को ईश्वर मानकर उनकी पूजा करना बेकार है। मूर्तिपूजको! सावधान, ईश्वर यह सब देख रहा है।

एक दिन एक आदमी किसी कार्य से किसी व्यक्ति के पास मिलने जाता है। पहुँचने पर पता चलता है कि कहीं बाहर गये हुये होने से वह व्यक्ति नहीं मिल पाया, किन्तु वहाँ उसके आवासीय मकान में उसका एक बड़ा सा चित्र लगा है, अनेक वस्तुयें, जिनका वह उपयोग क रता है, वे सब भी वहाँ मौजूद हैं। उस व्यक्ति के न रहने पर उसके चित्र, कुर्सी, मेज आदि जो सभी जड़ (बेजान) पदार्थ हैं, को अपनी इच्छा और कार्य बताकर आ जाने से क्या मिलने गये व्यक्ति का कार्य सिद्ध हो जायेगा? इसका उत्तर होगा-''निश्चित ही नहीं।'' कोई साधारण बुद्धि वाला व्यक्ति भी कार्य नहीं होने के कारण बता देगा, जो निम्नानुसार हैं-

१. कार्य कराने के इच्छुक व्यक्ति का कार्य करने वाले व्यक्ति से मिलना नहीं हुआ।

२. कार्य करने वाले व्यक्ति के आवास पर चित्र, कुर्सी, मेज आदि जड़ वस्तुओं को कही गई बात व प्रार्थना उस व्यक्ति तक नहीं पहुँची।

यदि हमें किसी को अपनी बात कहकर उससे कुछ प्राप्त करना है तो इसके लिये यह आवश्यक है कि हमारी इच्छा व प्रार्थना वाली आवाज उस तक पहुँचनी चाहिये, जिसके लिये कार्य कराने वाले व्यक्ति का कार्य करने वाले व्यक्ति से मिलना आवश्यक है। कुछ लोग तर्क देते हैं कि जैसे सांसारिक जगत् में खुद मिले बिना ही किसी व्यक्ति के माध्यम से बात पहुँचाकर सिफारिश और रिश्वत से काम बन जाते हैं वैसे ही परमात्मा से भी पुजारी-पण्डितों के माध्यम से काम कराया जा सकता है। यहाँ यह स्पष्ट कर देना उचित होगा कि मनुष्य को अपने-अपने कर्मों का ठीक-ठीक फल देने वाले सर्वज्ञ (सब कुछ जानने वाले) ईश्वर न तो किसी की सिफारिश मानते हैं और न ही वे रिश्वतखोर हैं। अत: ईश्वर से मिलने की राह को जानने वाला सच्चा महात्मा किसी इच्छुक व्यक्ति को ईश्वर से मिलने की केवल राह ही बतायेगा, उस तक बात पहुँचाने अथवा सिफारिश कर देने की बात कभी नहीं कहेगा। पूजा-पाठ के नाम पर धन-दौलत लेकर ईश्वर तक लोगों की बात पहुँचाने अथवा सिफारिश करने का झूठा एवं धोखाधड़ी वाला गोरखधन्धा तो ठग प्रवृत्ति के कुछ चतुर-चालाक पौराणिक, मूर्तिपूजक पण्डे-पुजारी ही कर रहे हैं।

अजर-अमर होने से परमात्मा सदा है तथा सर्वव्यापक होने से वह सब जगह व्याप्त है एवं सभी पदार्थों और जीव जन्तुओं में समाया हुआ है। इस तरह समस्त संसार उसमें और वह समस्त संसार में व्याप्त है। ऐसा कोई क्षण नहीं जब ईश्वर उपलब्ध न हो और ऐसा कोई कण नहीं जहाँ वह उपलब्ध न हो। पेड़-पौधे, जीव-जन्तु, पहाड़, नदियाँ, पत्थर, धातु आदि सब उस ईश्वर की कृतियाँ हैं, उसकी दी हुई सौगात हैं, जिनका हम अपनी आवश्यकता और इच्छा के अनुरूप उपयोग करते हैं लेकिन इनमें से कोई भी परमात्मा नहीं है। ईश्वर द्वारा निर्मित वस्तुओं (जड़ पदार्थों) तथा पेड़-पौधों एवं जीव-जन्तुओं के अंगों से ही शिल्पकार और चित्रकार द्वारा मूर्तियाँ और चित्र बनाये जाते हैं। परमात्मा को छोड़कर उसके द्वारा निर्मित पेड़-पौधों एवं जीव-जन्तुओं, निर्जीव वस्तुओं तथा इनसे निर्मित निर्जीव (बेजान) मूर्तियों और चित्रों की पूजा को ईश्वर की

पूजा मानना हमारी अज्ञानता ही है। अखण्ड भारतमाता की धरती पर जन्म लेने वाले राम, लक्ष्मण, सीता, दुर्गा (पार्वती), हनुमान, शंकर, कृष्ण आदि देवी-देवता उच्च कोटि के मनुष्य थे। पौराणिकों द्वारा ईश्वर के नाम पर इन्हीं देवी-देवताओं की मूर्तियों और चित्रों की पूजा की जा रही है। पूजी जा रही ये मूर्तियाँ और चित्र भी इनके असली रूप वाले नहीं हैं, बल्कि केवल कल्पना के आधार पर ही शिल्पकारों एवं चित्रकारों द्वारा इन्हें बनाया जा रहा है। मूर्ति और चित्र तो केवल सम्बन्धित व्यक्ति और उनके गुणों की ही याद दिलाते हैं। ''महान् स्त्री-पुरुषों के सद्गुणों को हमारे जीवन में धारण करना ही उनकी असली पूजा है और इसे ही कहते हैं-'चरित्र-पूजा,' जो करने योग्य है और न करने योग्य चित्र-पूजा से बेहतर है।'' पौराणिक पण्डितों द्वारा योगिराज श्रीकृष्ण के साथ उनकी धर्मपत्नी योगिनी रुक्मिणी की पूजा करने के स्थान पर तथाकथित प्रेमिका राधा की पूजा करके पति-पत्नी के सात्त्विक रिश्ते की तुलना में प्रेमिका के रिश्ते को महिमा-मण्डित करके समाज को पथ-भ्रष्ट किया जा रहा है। मैथुनरत अवस्था में शिवजी के लिंग और पार्वती की योनि को पूजने का फूहड़पन भी ऐसा ही है।

दुनिया में सभी जीव, जिनमें मनुष्य भी शामिल है, अपना मुँह खोलकर ही भोजन ग्रहण करते हैं। सभी जानते हैं कि प्राण प्रतिष्ठा का अनुष्ठान किये बिना भी और करने के बाद भी मूर्तियाँ और चित्र निर्जीव ही रहने के कारण भोजन करने के लिये अपना मुँह नहीं खोल सकते। फिर भी मन्दिरों में मूर्तियों और चित्रों को भोग लगाया जाता है। भोग में लाये गये भोजन को पुजारी-पण्डे और अन्य मूर्तिपूजक लोग ही खाते हैं। वास्तविकता यह है कि मूर्तियों और चित्रों के भोग लगाने की झूठ एवं पाखण्ड से परिपूर्ण प्रथा को ईश्वर और मृतक की आत्मा द्वारा भोजन ग्रहण करना मान लेने की हमारी गलत आस्था के सहारे लोगों को बहकाकर पौराणिक चतुर-चालाक मूर्तिपूजक पण्डे-पुजारियों ने मेहनत किये बिना ही अपना पेट भरने की व्यवस्था कर रखी है।

अत: प्रश्न पैदा होना स्वाभाविक है कि ईश्वर को छोड़कर उसके द्वारा निर्मित पेड़-पौधों एवं जीव-जन्तुओं, निर्जीव वस्तुओं तथा इनसे मनुष्य द्वारा निर्मित निर्जीव (बेजान) मूर्तियों और चित्रों को ईश्वर मानकर उनकी पूजा करने वालों को आस्तिक मानना कहाँ तक उचित है। उपरोक्त परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुये विद्वान् पाठक निष्पक्ष होकर इस प्रश्न का उत्तर स्वयं ही ढूँढ लें।

मूर्तियों और चित्रों को ईश्वर मानकर उनकी पूजा करने से भारत देश को हुई भारी क्षति के बारे में भी उल्लेख करना आवश्यक है, जो निम्नानुसार है-

१. मनुष्य द्वारा बनाई गईं (पैदा की गईं) बेटा-बेटी के समान मूर्तियों और चित्रों को आस्था के नाम पर ईश्वर मानकर पौराणिक मूर्तिपूजकों ने मनुष्य के लिये ईश्वर का दर्जा माता-पिता से घटाकर बेटा-बेटी का कर रखा है, जो उनका भारी अपमान है।

२. मूर्ति और चित्र को ईश्वर बताकर मनुष्य द्वारा उसे मन्दिर के एक कमरे में कैद कर दिया जाता है। इस तरह जिन मूर्तियों और चित्रों को भगवान् बताया जाता है, उस भगवान् की स्वतन्त्रता समाप्त करके मूर्तिपूजक लोग उन्हें अपना गुलाम बनाकर रखते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि आस्था के नाम पर मूर्ति और चित्र को ईश्वर कहकर सबके मालिक एवं माता-पिता को सरेआम (सबके सामने) गुलाम बनाकर पुजारी-पण्डे और अन्य मूर्तिपूजक लोग खुद उसके मालिक बन बैठे हैं। **इसे कहते हैं- 'उल्टी गंगा बहाना'**। यह तो ईश्वर का बड़ा भारी अपमान है। हैरानी की बात तो यह है कि आजकल के पढ़े-लिखे लोगों को भी यह बात समझ में नहीं आ रही है, क्योंकि प्राचीन काल में पौराणिक मूर्तिपूजक पुजारी-पण्डों तथा पौराणिक गुरुओं द्वारा हमारे पूर्वजों के मन और मस्तिष्क में भरा गया झूठी आस्था का जहर उनके वंशजों की रगों में अभी तक दौड़ रहा है। जैसे स्लेट, पट्टी और बोर्ड पर लिखे गये पुराने अक्षर मिटाकर ही उन पर नये अक्षर लिखे जाते हैं वैसे ही मूर्तिपूजकों के मस्तिष्क से मूर्तिपूजा के पौराणिक संस्कार मिटाये बिना उनमें ईश्वर की सच्ची उपासना के वैदिक संस्कार नहीं आ सकते।

३. अगर कोई बेटा अपने माँ-बाप को अपने घर या बाहर एक कमरे में कैद कर ले अथवा उसे वृद्धाश्रम में भेज दे तो सभी सभ्य लोग उसकी थू-थू करते हैं, लेकिन

सबके माता-पिता ईश्वर के साथ उक्तानुसार व्यवहार करने वाले पौराणिक मूर्तिपूजकों को धार्मिक कहकर लोग उन्हें अपने सिर-आँखों पर बैठाये हुये हैं। यह बड़ी विडम्बना है।

४. अपने साथ उद्दण्ड व्यवहार करने वाले पुत्र को अधिकतर माता-पिता हजार गालियाँ देते हैं और कभी-कभी तो ऐसे नालायक बेटे को अपनी सम्पत्ति से बेदखल भी कर देते हैं।

५. ईश्वर हमारा धन (द्रविणम्) भी है, जिस कारण उसे न तो धन की आवश्यकता है और न ही हमसे धन की कोई अपेक्षा है। फिर मूर्तियों और चित्रों को भगवान् मानकर उन पर धन-दौलत चढ़ाकर मन्दिरों में हमने बड़े-बड़े खजाने बना दिये। जब अपने व्यापारियों के माध्यम से इन खजानों का मुगलों को पता चला तो इन्हें लूटने के लिये वे भारत पर हमले करने लगे।

१. भारत के मन्दिरों को लूटने के लिये मुगल लुटेरों द्वारा किये गये हमलों के समय पुजारी-पण्डों और मूर्ति-पूजकों द्वारा सहायता के लिये गुहार लगाने पर भी मन्दिरों में कैद करके रखे मूर्ति और चित्ररूपी ईश्वर ने उनकी कोई मदद नहीं की। वैसे भी मूर्तियाँ और चित्र निर्जीव अर्थात् बेजान (जड़ पदार्थ) होने के कारण अपनी तथा किसी और की कोई मदद नहीं कर सकते। परिणामस्वरूप मुगल लुटेरे मन्दिरों को लूटते एवं खण्डित करते रहे, मूर्ति-पूजक जनता तथा पुजारी-पण्डे देखते रहे और मुगलों ने भारत में धीरे-धीरे अपना राज भी स्थापित कर लिया।

२. किसी भी सेना के सैनिक युद्ध में अपनी पत्नियों को साथ लेकर नहीं चलते। मन्दिरों की लूट के लिये हमलों के दौरान और यहाँ अपना राज स्थापित करने के बाद मुगल सैनिकों ने अपनी कामवासना की तृप्ति के लिये भारतीय स्त्रियों (बहू-बेटियों) से व्यभिचार और जबरन निकाह करके बच्चे पैदा किये, जो बाद में मुस्लिम आबादी के अंग हो गये। सीरिया और इराक की सीमाओं में बगदादी के नेतृत्व में सक्रिय मुस्लिम आतंकवादी संगठन 'आई. एस. आई. एस.' के लड़ाकों द्वारा वहाँ अपने ही मजहब की स्त्रियों के साथ किये जा रहे दुर्व्यवहार एवं उनके शारीरिक शोषण और मुगल बादशाहों के हरम में रखी गई सैकड़ों-हजारों स्त्रियों की संख्या से मुस्लिम धर्म के मुगल लड़ाकों और उनके बादशाहों के आचरण एवं चरित्र का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। गुलाम बनाने के बाद मुगलों ने हमें अपनी सम्पत्ति से बेदखल करना शुरु कर दिया। कुछ लोगों ने अपनी सत्ता और सम्पत्ति को बचाने के लिये मुस्लिम धर्म को अपना लिया तो अनेक लोगों को मार-मारकर मुसलमान बनाया गया। भारतीय पौराणिक समाज में व्याप्त जन्मना जाति-व्यवस्था और छुआछूत के कारण अपमानित एवं समाज में ऊँची जाति के दबंगों के अत्याचारों से परेशान नीची जाति के लोगों को जब इस्लाम ने गले लगाया तो ऐसे बहुत से लोगों ने इस्लाम कबूल कर लिया।

३. इस तरह मन्दिरों में मूर्तिपूजा, जन्मना जाति-व्यवस्था और छुआछूत के कारण भारत के वैदिकधर्मी लोग धीरे-धीरे मुस्लिम होते चले गये। इसके फलस्वरूप विशाल भारत से अफगानिस्तान, पाकिस्तान और बंग्लादेश मुस्लिम राष्ट्रों के रूप में अलग होते गये तथा भारत में भी मुसलमानों की लगभग २० प्रतिशत आबादी हो गई है। एक अनुमान के आधार पर इन चारों देशों के ९९ प्रतिशत से अधिक मुस्लिम लोग वैदिक धर्म (सनातन धर्म) को मानने वाले मूल भारतीय पूर्वजों के ही वंशज हैं। इस तरह इन चारों देशों में वैदिकधर्मी (तथाकथित हिन्दू) और मुस्लिम लोग एक ही धर्म को मानने वाले पूर्वजों के वंशज होने से भाई-भाई होकर भी धर्म के नाम पर आपस में लड़ रहे हैं तथा सनातनी लोग भी जन्मना जाति व्यवस्था और छुआछूत के कारण आपस में लड़-मर रहे हैं, जिससे यूरोपीय देशों की तुलना में ये देश विकास में पिछड़ गये हैं। इसे ही कहते हैं-'अपने पैर पर कुल्हाड़ी मारना।'

विद्वान् स्त्रियों को योग्य है कि अच्छी परीक्षा किए हुए पदार्थ को जैसे आप खायें वैसे ही अपने पति को भी खिलावें कि जिससे बुद्धि, बल और विद्या की वृद्धि हो और धनादि पदार्थों को भी बढ़ाती रहें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४२

पुस्तक – समीक्षा

पुस्तक का नाम- हृदय की तड़पन
सम्पादक- श्री राजेन्द्र 'जिज्ञासु'
लेखक- महाकवि दुर्गासहाय जी 'सुरूर'
प्रकाशक- वेद प्रचार मण्डल, पंजाब
मूल्य- १००/- **पृष्ठ**- १४०

जीवन को अगर कविता कहें तो निरर्थक न होगा। भला कविता के बगैर रस कहाँ? फिर तो ये प्रकृति सूखे बंजर सी मालूम हो। ये बादलों की गड़गड़ाहट, पक्षियों की चहचहाहट, बिजलियों की चकाचौंध, सागर की हिलोरें, नदियों का प्रवाह, हवाओं की सरसराहट सब व्यर्थ हो जावें। इनमें अर्थ ढूँढ लेना ही तो कविता है वर्ना भ्रम कह देने वाले भरमायों की कमी नहीं। और फिर प्रकृति के बिना जीवन की कल्पना भी कौन करे? अहो! कैसी विडम्बना है प्रभु का निर्माण भी काव्य है और सन्देश भी। तभी तो हम उन्हें कविता कहते हैं। हे मनुज! अपने शुष्क स्वप्नों से तनिक बाहर तो झाँक। देख! जागृति तेरी बाट जोहती है। तेरी यही जागृति ही तो कविता है। बुद्धि से उपजे सन्देह तेरी सन्तुष्टि का कारण न बन सकेंगे। इन सन्देहों का अन्त ही तो कविता है। हे कवि हृदय! तेरी तड़पन पर सौ-सौ निसार।

यह पुस्तक एक कवि के हृदय की तड़पन है। उसके मनोभावों की झंकार है। इस कवि का, नहीं-नहीं महाकवि का नाम श्री दुर्गासहाय जी 'सुरूर' है। यह नाम उन नामों में से है जिनके साथ इतिहासज्ञों ने बड़ा अन्याय किया है। उपकार मानना होगा श्री राजेन्द्र जी 'जिज्ञासु' का जिन्होंने इतिहासज्ञों को इस कलंक से बचा लिया। जिनके सम्पादन में सम्पादित हुई यह पुस्तक आर्य साहित्य में एक अभूतपूर्व योगदान है। आदरणीय जिज्ञासु जी की ही लेखिनी से लिखा हुआ सुरूर जी का संक्षिप्त जीवन- परिचय भी संगृहीत किया गया है। उनके द्वारा की गयी इस मेहनत को कोई विरला ही परख सकता है। सुरूर जी वे प्रथम व्यक्ति हैं जिन्होंने उर्दू काव्य को एक नई दिशा प्रदान की। जो उर्दू-काव्य जन्नत की हूरों, माशूका की जुल्फों तथा नबी के सजदों तक सीमित था उसमें राष्ट्रवाद की चिंगारी भड़का देना सुरूर जैसे दिग्गज का ही काम है। डॉ. इकबाल जैसे कवियों पर भी महाकवि सुरूर जी की छाप स्पष्ट देखी जा सकती है।

सुरूर जैसे लोग सदियों में नहीं सहस्राब्दियों में कभी एक बार पैदा होते हैं। पर न जाने क्यूँ ऐसी प्रतिभायें इतिहासज्ञों की उपेक्षा का शिकार बन जाती हैं बल्कि विरोधी तो उन्हें बदनाम करने में भी नहीं चूकते। सुरूर जी के जीवन को पढ़कर जिसकी आखें न डबडबा जायें ऐसा मनुष्य खोजना दुर्लभ है। ऐसे व्यक्ति की कलम से तो बस तड़प ही निकल सकती है। इसी तड़प का नाम तो 'हृदय की तड़पन' है। यह पुस्तक सुरूर जी की कुछ चुनी हुई दुर्लभ रचनाओं का संग्रह है। अगर सुरूर जी की समस्त रचनायें उपलब्ध होतीं तो भूमण्डल पर कुछ अद्‌भुत काव्य देखने को मिल सकते थे। पर, दुर्भाग्य.....। हाँ! एक सौभाग्य भी है कि श्री राजेन्द्र 'जिज्ञासु' जी जैसे लोग अभी हैं, जिनकी तड़प दुर्लभ को सुलभ बना देना है, जिनके कारण यह अद्‌भुत ग्रन्थ उपलब्ध हो सका है। उनके धन्यवाद में तो यह कलम चलने से रही। हम तो निवेदन कर सकते हैं कि सुरूर जी पर कुछ और सामग्री भी पाठकों को उपलब्ध करायें ताकि इस महाकवि के नाम से दुनिया परिचित हो सके।

सोमेश पाठक

जिसके माता और पिता विद्वान् न हों उनके सन्तान भी उत्तम नहीं हो सकते।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.९

मनुष्यों को चाहिये कि पुरुषार्थ से विद्या का सम्पादन, विधिपूर्वक अन्न और जल का सेवन, शरीरों को नीरोग और मन को धर्म में निवेश करके सदा सुख की उन्नति करें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.१४

पृष्ठ संख्या ८ का शेष भाग .....

करता। आप साइकिल, मोटर साइकिल चलाते हुए भगवान को सोचने लगे तो मोटर साइकिल कहाँ जाएगी? उपासना पूरी हो जाएगी एक ही बार में! इसलिए उपासना का जो प्रकार है, वो बाहर वाला चल ही नहीं सकता। जब आप मन को बात करने में लगाओगे। मन से बात करने लगोगे तो शरीर तो निष्क्रिय होना ही होना है। हाथ, पैर, आँख, कान कुछ सक्रिय नहीं होगा, यह तो सब बाहर के धंधे हैं। कठोपनिषद् की एक सुन्दर सी पंक्ति है- **परांञ्चि खानि व्यतृणत् स्वयंभूस्तस्मात्परांपश्यति नान्तरात्मन्। कस्विद्धीरः प्रत्यगात्मानमैक्षदावृत्तचक्षुरमृतत्त्वमिच्छन्।।**

कहता है कि मन से क्यूँ करते हैं बाकि से क्यूँ नहीं करते? जब बाहर भी करते हैं, मन तो तब भी काम आता है हाथ से करें, पैर से करें, आँख से करें, वो मन के बिना तो काम नहीं आते आप मन से जब तक न चाहें कि हाथ उठाना है, तब तक हाथ उठेगा भी नहीं। तो फिर यहाँ उपासना में इसको क्यूँ नहीं लेते। इसलिए कि हम अन्दर की यात्रा में है। जब अन्दर की यात्रा में होंगे तो बाहर के साधन काम नहीं आयेंगे। वो जो अमृतमय आत्मा है, वो बाहर नहीं है, इसलिए बाहर के साधन काम में आते नहीं तो **युञ्जानः प्रथमं मनः** मनुष्य पहले मन को परमेश्वर में लगाए। क्यों लगाए, किसको जानने के लिए, तत्त्व को जानने के लिए, सार को जानने के लिए, अन्तिम लक्ष्य को जानने के लिए मनुष्य मन को लगाए। अब इसमें एक तथ्य क्या निकलकर आता है- हम यह समझते हैं कि हम यहाँ से दौड़ लगाएं और शहर में चले गए या यहाँ से गाड़ी में बैठे, दिल्ली पहुँच गए, हवाई जहाज में बैठे लन्दन पहुँच गए तो हमारी इच्छा है कि बैठें और भगवान तक पहुँच जायें। ऐसा नहीं है। ऐसा क्यों नहीं है? **युञ्जानः प्रथमं मनस्तत्त्वाय सविताधियं** कहता है, अगला काम आप नहीं करते, अगला काम परमेश्वर करता है, जब आप मन उसमें लगाते हो, तो वो आपकी बुद्धि में प्रकाशित होता है। बुद्धि में युक्त होता है। वो हमको बुद्धि में मिलता है और जब मिल जाता है तो कोई भी आदमी किसी भी चीज के मिलने पर क्या करेगा? कोई अच्छी सी चीज यदि कहीं मिल जाए तो क्या करेगा? छोड़ के चल देगा? कोई बात नहीं फिर मिलेंगे, ऐसा हो जाएगा? क्या करेगा, उसे प्राप्त कर लेगा। तो मन्त्र कहता है कि '**युञ्जानः.....धियं अग्नेर्ज्योतिर्निचाय्य**- जैसे ही ईश्वर की कृपा मिलेगी, तो क्या करेंगे हम उसे बस समेट लेंगे, छोड़ने का अवसर ही नहीं देंगे।

अग्नेर्ज्योतिर्निचाय्य पृथिव्या अध्याभरत्

स्वामी जी ने मन्त्र का जब अर्थ किया है तो उसमें एक वाक्य लिखा है कहते हैं- पृथ्वी पर यह योगियों का लक्षण है। तो अब इसमें **पृथिव्या** जो शब्द आया है, उसका बाकी उपासना से तो कुछ सम्बन्ध नहीं है, न मन से है, न धिया से है, न **अग्निर्ज्योतिर्निचाय्य** से है। और **अध्याभरत्** का तात्पर्य है कि उस अनुभूति को आपको बनाके रखना है। उसको लौटने नहीं देना है, क्योंकि प्राप्ति जो है वह मेरे हाथ में नहीं है। प्राप्ति के लिए योग्यता होना, यह मेरा काम है। यह कुछ बिल्कुल इस तरह से है, जैसे आप कहें कि कोई मुझे डिग्री दे दे। वो कहेंगे कि भई परीक्षा दे दे। पास हो जाएगा तो मिल जाएगी। वैसे तो नहीं मिलेगी। वैसे ही आप कहो कि ईश्वर मिल जाएगा, ऐसे तो नहीं मिलेगा। हाँ, प्रयत्न करो, **नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुनाश्रुतेन। यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनूं स्वाम्।** (मु. ३.२.३) कहता है कि इसका बुद्धि से कोई सम्बन्ध नहीं है। बुद्धि से सम्बन्ध इसलिए नहीं है कि बुद्धि के काम आप बाहर से करते हो। आप पुल बहुत बढ़िया बना रहे हो इसलिए आपको भगवान मिल जाएगा, इसका कोई मतलब नहीं। पुल बढ़िया बन जाएगा, उसमें क्या बात है। बुद्धि से जो काम किया वही तो होगा। आप यह सोचते हो बुद्धिमान व्यक्ति को भगवान मिल जाना चाहिए। मिल तो जाएगा, लेकिन यदि वो भगवान के बारे में सोचेगा, भगवान के बारे में विचार करेगा तब केवल बुद्धिमान होगा और करेगा कुछ नहीं, तो यह तो बिलकुल वैसा ही हुआ जैसे बहुत बुद्धिमान आदमी है, पढ़ता ही नहीं है, परीक्षा ही नहीं देता तो इसे उपाधि क्यूँ नहीं मिली क्योंकि बुद्धिमत्ता का उपाधि से सीधा सम्बन्ध है ही नहीं। **नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यः**- आप बहुत सारे प्रवचन सुनें, करें तो क्या इससे ईश्वर मिल जाएगा, नहीं मिलेगा, फिर बन्द कर देना चाहिए? क्या विचार है? प्रवचन बन्द कर दें, मिलना तो है ही नहीं फिर क्यूँ करते हैं? मिलने के लिए वैसे ही है, उपाधि तो मिलेगी

पर जब परीक्षा देंगे तब परीक्षा तब देंगे जब पढ़ेंगे। इसलिए जैसे उपाधि के लिए पढ़ना आवश्यक है, वैसे ही उस योग्यता के लिए प्रवचन सुनना और करना आवश्यक है। जब तक आप बौद्धिक रूप से, वैचारिक रूप से स्पष्ट नहीं हैं तब तक आप उसकी कार्य में परिणिति नहीं कर सकते। जब आप चीज में स्पष्ट होते हैं तो आपको करने में भी कठिनाई नहीं होती। और करने में कठिनाई न हो इसलिए विचारों का स्पष्ट होना आवश्यक है। **नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यः न मेधया न बहुना श्रुतेन।**

हमारे यहाँ दो शब्द काम में आते हैं।

किसी को भी विद्वान् बनाने के लिए, बताने के लिए दो योग्यताएँ होती हैं- बहुश्रुत और बहुपठित। जिसने बहुत पढ़ा है, उसे बहुपठित कहते हैं और पढ़ा तो उसने भले ही ना हो पर लोगों को सुना बहुत है। उसे बहुश्रुत कहते है।

एक बार मैं वानप्रस्थ आश्रम, ज्वालापुर में प्रवचन देके आ रहा था, विद्यार्थी था, तो एक व्यक्ति बोला कि पिछले ४५ साल से मैं दोनों समय प्रवचन सुनता हूँ। ४५ वर्ष हो गए प्रवचन सुनते-सुनते। कौन से वेदानन्द जी, कौन से स्वतन्त्रानन्द जी, कौन से आत्मानन्द जी बचे होंगे, उस भले आदमी के पास। ४५ साल दोनों समय प्रवचन सुने तो ईश्वर तो प्राप्त हो गया होगा? पर लगा तो नहीं। सुनने मात्र से प्राप्ति नहीं हो जाएगी- **नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यः न मेधया न बहुना श्रुतेन**- फिर कैसे मिलेगा?- **यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः।** अरे आप दरवाजे तक जा सकते हो, लेकिन दरवाजा खोलना आपके हाथ में नहीं है, कुंडा अदर से बन्द है, अन्दर वाला कब मिलेगा? जब वो चाहेगा, आपके चाहने से थोड़े ही मिल जाएगा। बजाते रहो घंटी। लेकिन वो उचित समझेगा, पात्र समझेगा तो वो आपको **यमेषैव वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनूं स्वाम्।**

उपासना तो बहुत करते हैं, लेकिन प्राप्त उसे होता है, जिसे वो चुनता है, जिसे वो चाहता है।

तो इस मन्त्र के मोटे-मोटे शब्दों को देख लेते हैं।

पहले मनुष्य को अपने मन को उपासना में लगाना चाहिए- **युञ्जानः प्रथमं मनः** क्यों **तत्त्वाय**-तत्व के लिए, फिर क्या होगा, **धिया**-बुद्धि में वो प्रकाशित होगा। मतलब हमारी जो उपासना का प्रयास है, वो सफल हुआ है, यह बुद्धि में पता लगेगा। और यदि हम सफल हो जाएं, आदमी उसको फिर अपने से जोड़ लेता है, अपने से पृथक् नहीं होने देता। अर्थात् वो और उसका साथ सदा बना रहता है। **पृथिव्या** का अर्थ है आप जिसको भी देखो और ऐसा पाओ तो समझ लेना कि उसका उससे सम्बन्ध है।

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्ष २०१२ से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ निःशुल्क दी जाती हैं। डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने,

जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091

email : psabhaa@gmail.com

संस्था-समाचार

महर्षि दयानन्द सरस्वती निर्वाण स्थल पर यज्ञ- १९ अक्टूबर दीपावली पर सायंकाल महर्षि दयानन्द निर्वाण स्मारक स्थल, भिनाय कोठी, जयपुर रोड अजमेर में आर्ष गुरुकुल ऋषि उद्यान के ब्रह्मचारियों द्वारा यज्ञ सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर आचार्य सत्यजित्, स्वामी मुक्तानन्द, उपाचार्य सत्येन्द्र आर्य, निर्वाण स्मारक न्यास के अधिकारी-गण तथा अन्य ऋषिभक्तगण उपस्थित थे।

भव्य ऋषि मेला सम्पन्न- १३४वाँ ऋषि बलिदान समारोह का यह आयोजन विभिन्न चरणों में अत्यन्त श्रद्धा और उल्लासपूर्वक सम्पन्न हुआ।

वेद पारायण यज्ञ-२५ अक्टूबर से २९ अक्टूबर तक प्रतिदिन प्रातः ७.०० से ९.०० बजे तक तथा सायं ४.०० से ६.०० बजे तक दोनों समय यजुर्वेद पारायण यज्ञ का आयोजन हुआ। २७ से २९ अक्टूबर तक तथा सायं ६.०० से ७.०० बजे तक सामूहिक संध्या की गई। यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य सत्यानन्द वेदवागीश थे। महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल ऋषि उद्यान के ब्रह्मचारी चन्द्रदेव, ब्र. भूदेव, ब्र. अभयदेव, ब्र. दिलीप, ब्र. रविशंकर ने वेद पाठ किया। इस यज्ञ में परोपकारिणी सभा के पदाधिकारी एवं सदस्यगण सपरिवार यजमान बने तथा ऋषि मेले में आने वाले ऋषिभक्त भी दोनों सत्रों में यजमान बनते रहे।

मेले में पधारे ऋषि-भक्तों को प्रातःकाल ५.०० से ६.३० बजे तक ब्र. वरुण देव ने तीनों दिन आसन, प्राणायाम, ध्यान का अभ्यास एवं सूक्ष्म व्यायाम करवाया।

ध्वजारोहण एवं उद्घाटन समारोह- ऋषि मेले का प्रारम्भ महर्षि दयानन्द सरस्वती भवन के प्रांगण में सभा के कार्यकारी प्रधान डॉ. सुरेन्द्र कुमार द्वारा ध्वजारोहण से हुआ।

विभिन्न सत्र- प्रथम दिन २७ अक्टूबर शुक्रवार को प्रातः यज्ञ के पश्चात् गुरुकुल शिवगंज की आचार्या सूर्यादेवी का वेद-प्रवचन हुआ, तदुपरान्त ११.०० से १२.३० बजे तक श्री प्रियव्रत आर्य, दिल्ली की अध्यक्षता एवं डॉ. जगदेव जी के संयोजन में **समाज सुधार-दशा और दिशा** विषय पर व्याख्यान हुए।

दोपहर २.०० से ५.०० बजे तक **राष्ट्र निर्माण में आर्यसमाज की भूमिका** विषय पर व्याख्यान हुए। इसके अध्यक्ष डॉ. रघुवीर वेदालंकार तथा संयोजक श्री धर्मेन्द्र जिज्ञासु रहे।

रात्रिकाल ८.०० से १०.०० बजे तक **धर्मनिरपेक्षता और मत-मतान्तर** विषय पर व्याख्यान का आयोजन हुआ। इसके अध्यक्ष परली वैजनाथ के डॉ. ब्रह्ममुनि थे। श्री रामनिवास गुणग्राहक संयोजक रहे। सभी सत्रों के व्याख्यान के आरम्भ में पं. सत्यपाल 'पथिक', भजनोपदेशक श्री भूपेन्द्र सिंह, श्री लेखराज आर्य, पं. श्रीपाल आर्य, श्री रामदयाल आर्य एवं श्री अशोक आर्य आदि के भजन हुए।

दूसरे दिन २८ अक्टूबर शनिवार को प्रातःकाल यज्ञ के पश्चात् मेरठ निवासी डॉ. वेदपाल ने वेद-प्रवचन किया।

लोकार्पण समारोह-यज्ञ-प्रवचन के पश्चात् ऋषि उद्यान के नवीन कार्यालय, वाचनालय, आयुर्वेदिक औषधालय के नवीन कक्ष एवं भूमिगत पार्किंग का श्री सज्जन सिंह कोठारी लोकायुक्त, राजस्थान द्वारा लोकार्पण किया गया।

प्रातः १०.०० से १२.३० बजे तक **राष्ट्र निर्माण में युवाओं की भूमिका** विषय पर व्याख्यान हुए। इस सत्र के अध्यक्ष आचार्य ओमप्रकाश, आबू गुरुकुल तथा संयोजक डॉ. विनय विद्यालंकार रहे।

२.०० से ५.०० बजे तक **२१ वीं सदी और महर्षि दयानन्द** विषय पर व्याख्यान का आयोजन हुआ।

सायं ५.०० से ६.३० बजे तक आर्यवीर दल के आर्यवीरों ने विभिन्न प्रकार के आसन, व्यायाम, अस्त्र-शस्त्र आदि का प्रदर्शन किया।

रात्रि ८.०० से १०.०० बजे तक **आचार्य धर्मवीर**-

वेद प्रचार सम्मेलन हुआ। यह सत्र इस ऋषि मेले का विशेष आकर्षण रहा। इस सत्र की अध्यक्षता डॉ. सोमपाल शास्त्री (पूर्व केन्द्रीय कृषि मन्त्री, भारत सरकार) ने की। इस कार्यक्रम के मुख्य वक्ता एवं ऋषि मेले के मुख्य अतिथि डॉ. सत्यपाल सिंह (केन्द्रीय राज्यमन्त्री, भारत सरकार) ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि देश के अधिकांश विश्वविद्यालयों में महर्षि दयानन्द पीठ स्थापित करने हेतु मैं अपना पूरा प्रयास करूँगा। इसी सत्र में आचार्य डॉ. धर्मवीर स्मृति-ग्रन्थ 'वेद पथ के पथिक' एवं 'महर्षि दयानन्द सरस्वती के कुछ हस्तलिखित पत्र' पुस्तक का विमोचन हुआ। वेद प्रचार हेतु मनुस्मृति की एक वेबसाइट का भी लोकार्पण हुआ, जो पं. लेखराम वैदिक मिशन के कार्यकत्ताओं द्वारा तैयार की गई। इस वेबसाइट को आचार्य धर्मवीर जी को समर्पित किया गया।

रविवार २९ अक्टूबर को प्रात:काल यज्ञ के पश्चात् डॉ. विनय विद्यालंकार ने व्याख्यान दिया।

प्रात: १०.३० से १२.३० बजे तक **शिक्षा का महत्त्व और चुनौतियाँ** विषय पर व्याख्यान हुए।

दोपहर २.०० से ५.०० बजे तक **स्वामी श्रद्धानन्द संन्यास एवं गुरुकुलों की प्रासंगिकता** विषय पर सम्मेलन हुआ। इस कार्यक्रम के संयोजक डॉ. वेदप्रकाश विद्यार्थी जी रहे।

रात्रि ८.०० से १०.०० बजे तक धन्यवाद व समापन सत्र हुआ। सभा मन्त्री श्री ओम्‌मुनि द्वारा धन्यवाद ज्ञापित किया गया।

वेद गोष्ठी- ३० वीं अन्तर्राष्ट्रीय वेद गोष्ठी २०१७ का विषय रहा- वेदों में शिक्षा के सिद्धान्त। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री सुरेशचन्द्र आर्य ने गोष्ठी का उद्‌घाटन किया। आचार्या सूर्यादेवी अध्यक्ष रहीं। डॉ. वेदप्रकाश विद्यार्थी के संयोजन में देश के विभिन्न भागों से इस गोष्ठी में कुल ३४ विद्वानों ने भाग लिया एवं पत्रवाचन किया। प्रथम सत्र २७ अक्टूबर प्रात: ११.०० बजे से १२.३० बजे तक, द्वितीय सत्र २.३० से ५.०० बजे तक, २८ अक्टूबर को तृतीय सत्र १०.०० से १२.३० बजे तक, चतुर्थ सत्र २.३० से ५.०० बजे तक, २९ अक्टूबर को समापन सत्र हुआ। प्रतिभागी- १. डॉ. बाबूलाल जोशी, इन्दौर २. स्वामी सोम्यानन्द सरस्वती, मथुरा ३. डॉ. जीवन लाल आर्य, दिल्ली ४. डॉ. राकेश शास्त्री, बाँसवाड़ा ५. डॉ. शिवनारायण उपाध्याय, कोटा ६. श्री संदीप जी, हरिद्वार ७. डॉ. नयन कुमार आचार्य, परली बैजनाथ ८. ब्रह्मचारिणी लक्ष्मी, कन्या गुरुकुल शिवगंज ९. ब्र. प्रियंका, शिवगंज १०. ब्र. चाँदनी, शिवगंज ११. ब्र. जयश्री, शिवगंज १२. ब्र. कृष्णा, शिवगंज १३. ब्र. ऋतम्भरा, शिवगंज १४. ब्र. सुरुचि, शिवगंज १५. आचार्य उपेन्द्र मीमांसक, सहारनपुर १६. आचार्य वेदनिष्ठ, ऋषि उद्यान अजमेर १७. डॉ. प्रीति विमर्शिनी, वाराणसी १८. श्रीमती कृष्णा शर्मा, अलवर १९. सुश्री गीनू देवी, जोधपुर २०. जीनत जहाँ पठान, जोधपुर २१. डॉ. दीपमाला, जोधपुर २२. कपिल मलिक, जोधपुर २३. डॉ. शंकर विद्यावाचस्पति, उदयपुर २४. आचार्य वेदव्रत जी, कुरुक्षेत्र २५. पं. रामनिवास गुणग्राहक, भरतपुर २६. पं. अखिलेश आर्येन्दु, दिल्ली २७. डॉ. आशुतोष पारीक, ब्यावर २८. प्रियंका सिंह, कन्या गुरुकुल देहरादून २९. दीप्ति आर्या, देहरादून ३०. आचार्य डॉ. सूर्यादेवी जी, शिवगंज, ३१. डॉ. अन्नपूर्णा जी, देहरादून ३२. डॉ. प्रभावती पारीक, जयपुर ३३. डॉ. विनय विद्यालंकार ३४. डॉ. माधुरी गुप्ता, सरवाड़।

विभिन्न पुरस्कारों से सम्मानित- १. डॉ. प्रियव्रत दास वेद वेदांग पुरस्कार २१०००/- इक्कीस हजार रुपये- श्री राजेन्द्र जिज्ञासु। २. दीपचन्द आर्य धर्मार्थ न्यास पुरस्कार दिल्ली २१०००/- इक्कीस हजार रूपये-डॉ. राजेन्द्र विद्यालंकार। ३. श्री मुमुक्षु आर्ष पाठ विधि पुरस्कार ११०००/ - ग्यारह हजार रुपये-आचार्या अन्नपूर्णा, कन्या गुरुकुल देहरादून। ४. श्री विश्वकीर्ति आर्य पुरस्कार ११०००/- ग्यारह हजार-श्री रणवीर आर्य, हैदराबाद। ५. श्री रघुवर सिंह सुधारक पुरस्कार २१०००/- इक्कीस हजार रुपये- डॉ. रघुवीर वेदालंकार, दिल्ली। ६. स्वामी आशुतोष आर्य अध्यापक पुरस्कार ११०००/- ग्यारह हजार रुपये-डॉ. रामचन्द्र, कुरुक्षेत्र। ७. देवेन्द्रानन्द वैदिक धर्म प्रचारक

पुरस्कार ११०००/- ग्यारह हजार-श्री वृद्धिलाल गोस्वामी। ८. श्रीमती सुमनलता इन्द्रजित् देव कार्यकर्त्ता पुरस्कार ११०००/- ग्यारह हजार-श्री प्रियव्रत जी, हैदराबाद। ९. स्व. सेठ श्री मथुरा प्रसाद नवाल एवं स्व. श्रीमती कमला देवी नवाल विद्वत् सम्मानार्थ पुरस्कार ३१०००/- इकतीस हजार रुपये-आचार्य नन्दकिशोर आर्य। १०. श्रीमती कुसुम-कृष्ण स्मृति वेद प्रचार पुरस्कार ११०००/- श्रीमती अनुपमा जी। ११. श्री विरदीचन्द ईनाणी आर्ष छात्रवृत्ति २१०००/- इक्कीस हजार-ब्र. सत्यव्रत जी। १२. श्री ब्रह्मदत्त शर्मा एवं श्रीमती शकुन्तला देवी आर्ष छात्रवृत्ति ११०००/- ग्यारह हजार-ब्र. शिवनाथ वैदिक। १३. श्री नौबतराम वानप्रस्थी द्वारा आचार्य डॉ. धर्मवीर आदर्श पुरुष स्मृति सेवा पुरस्कार ५१००/- पाँच हजार एक सौ-श्री हरिसिंह वासनवाल। १४. श्री नौबतराम वानप्रस्थी आचार्य डॉ. धर्मवीर आदर्श पुरुष स्मृति सेवा पुरस्कार ५१००/- पाँच हजार एक सौ-श्री मोहनलाल तंवर। १५. श्री नौबतराम वानप्रस्थी आचार्य डॉ. धर्मवीर आदर्श पुरुष स्मृति सेवा पुरस्कार ५१००/- पाँच हजार एक सौ-श्री रामकिशन जी माली। १६. श्री नौबतराम वानप्रस्थी आचार्य डॉ. धर्मवीर आदर्श पुरुष स्मृति सेवा पुरस्कार ५१००/- पाँच हजार एक सौ-श्री वासुदेव आर्य। १७. श्री नौबतराम वानप्रस्थी आचार्य डॉ. धर्मवीर आदर्श पुरुष स्मृति सेवा पुरस्कार ५१००/- पाँच हजार एक सौ-श्रीमती लक्ष्मी देवी।

वेदपाठ प्रतियोगिता- आचार्य सत्यजित् के निरीक्षण में देश के विभिन्न गुरुकुलों से आये हुए ५ ब्रह्मचारिणियों एवं २ ब्रह्मचारियों ने इस प्रतियोगिता में भाग लिया। आचार्य वेदव्रत, आचार्य ओम्प्रकाश, आचार्य रामदयाल एवं आचार्य कश्यप कुमार ने परीक्षा ली। पुरस्कृत वेदपाठियों के विवरण इस प्रकार हैं-

१. सुश्री सुनीति, कन्या गुरुकुल शिवगंज (यजुर्वेद) प्रथम पुरस्कार १५०००/- पन्द्रह हजार रुपये। २. सुश्री नेहा, कन्या गुरुकुल चोटीपुरा (यजुर्वेद) द्वितीय पुरस्कार १३०००/- तेरह हजार रुपये। ३. सुश्री प्रज्ञा, कन्या गुरुकुल चोटीपुरा (यजुर्वेद) तृतीय पुरस्कार ११०००/- ग्यारह हजार रुपये। ४. सुश्री अनुषा, कन्या गुरुकुल चोटीपुरा (सामवेद) प्रथम पुरस्कार ११०००/- ग्यारह हजार रुपये। ५. सुश्री रञ्जीता, (सामवेद) सान्त्वना पुरस्कार ३१००/- तीन हजार एक सौ रुपये। ६. श्री नरेश, (ऋग्वेद) सान्त्वना पुरस्कार ३१००/- तीन हजार एक सौ रुपये। ७. श्री गोवर्धन, (ऋग्वेद) सान्त्वना पुरस्कार ३१००/- तीन हजार एक सौ रुपये।

प्रचार सामग्री के विभिन्न स्टॉल- इस वर्ष ऋषि मेले में पुस्तक प्रकाशकों, यज्ञपात्र एवं हवन सामग्री निर्माताओं, आयुर्वेदिक दवा निर्माताओं के कुल ५७ स्टॉल लगे। जो सभी संन्यासियों, विद्वानों, ब्रह्मचारियों एवं आगन्तुकों के लिये विशेष आकर्षण का केन्द्र रहा।

ऋषिभक्तों की उपस्थिति-इस बार ऋषि मेले में अजमेर नगर एवं राजस्थान के अन्य स्थानों से ११२५ तथा उड़ीसा, उ.प्र., म.प्र., आन्ध्रप्रदेश, गुजरात, उत्तराखंड, महाराष्ट्र, हरियाणा, दिल्ली, पंजाब, छत्तीसगढ़, बिहार, झारखंड, कर्नाटक, तेलंगाना, हिमाचलप्रदेश से ११६६ लोग ऋषि उद्यान पधारे। आमंत्रित विद्वानों, संन्यासियों, आर्यवीरों, कार्यकर्ताओं, कर्मचारियों की संख्या ४०० रही।

जन्मदिवस पर यज्ञ- १५ अक्टूबर स्वामी देवेन्द्रानन्द जी ने अपने जन्मदिन पर, १६ अक्टूबर (धनतेरस) श्री वासुदेव आर्य ने अपने जन्मदिन पर, २४ अक्टूबर श्री जयपाल सिंह ने अपने पौत्र हर्षवर्धन के जन्मदिन पर, श्री रमेश मुनि ने २६ अक्टूबर को अपने भतीजे मोक्षित के जन्म दिन पर तथा ३० अक्टूबर को अपनी भतीजी चहक के जन्मदिन पर, २८ अक्टूबर परोपकारिणी सभा के कोषाध्यक्ष श्री सुभाष नवाल ने अपने जन्मदिन पर यज्ञ किया। सभी यजमानों को सपरिवार परोपकारिणी सभा की ओर से हार्दिक शुभकामनाएं।

दैनिक प्रवचन-१६ से २५ अक्टूबर तक प्रातःकालीन प्रवचन के क्रम में स्वामी विष्वङ् परिव्राजक, स्वामी केवलानन्द, आचार्य सत्यजित्, आचार्य शिवकुमार के व्याख्यान हुए। सायंकालीन यज्ञ उपरान्त प्रवचन में उपाचार्य सत्येन्द्र ने ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका पुस्तक पर चर्चा की।

आर्यजगत् के समाचार

१. महोत्सव सम्पन्न- सत्यार्थप्रकाश, संस्कारविधि आदि ऋषिकृत ग्रन्थों के उड़िया अनुवादक श्री वत्स पण्डा का १४८वाँ जयन्ती महोत्सव १ अक्टूबर २०१७ को गुरुकुल हरिपुर के संचालक डॉ. सुदर्शनदेव आचार्य के संयोजकत्व में एवं आश्रम के समस्त पदाधिकारियों व कार्यकर्त्ताओं के प्रबल पुरुषार्थ से सम्पन्न हुआ।

२. वार्षिकोत्सव- आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय नर्मदापुरम् होशंगाबाद, म.प्र. का १०६वाँ वार्षिकोत्सव दि. ८, ९ व १० दिसम्बर २०१७ को भव्यतापूर्वक आयोजित किया जा रहा है। इस समारोह में आप सभी गुरुकुल हितैषी धर्मप्रेमी सज्जन इष्टमित्रों सहित सपरिवार सादर अमन्त्रित हैं। सम्पर्क सूत्र- ९९०७०५६७२६

३. शिलान्यास सम्पन्न- दि. २९ सितम्बर २०१७ को श्रीमती चन्द्रावती कन्या गुरुकुल संस्कृत विद्यापीठ, प्रहलादपुर, सोरों का शिलान्यास विधिवत् सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम का शुभारम्भ आर्य कन्या गुरुकुल, शिवगंज की आचार्य सूर्यादेवी चतुर्वेदा के ब्रह्मत्व में यज्ञ के माध्यम से हुआ। गुरुकुल की अधिष्ठात्री आचार्या डॉ. धारणा याज्ञिकी ने सभी अतिथियों एवं उपस्थित विशाल जनसमूह का आभार व्यक्त किया। शान्तिपाठ के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

४. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- जोधपुर स्थित आर्यसमाज मगरा, पूँजला, नयापुरा, जोधपुर, राज. का ८१वाँ वार्षिकोत्सव दि. ८ से १० अक्टूबर २०१७ को आयोजित किया गया। इस अवसर पर स्वामी विदेह योगी-कुरुक्षेत्र, सुदेश आर्या-दिल्ली के परिवार विषय पर भजन-प्रवचन हुए। यज्ञ के ब्रह्मा विमल शास्त्री थे।

५. आर्यसमाज के गौरव- आर्यसमाज की जिन लोगों ने तन-मन-धन से सेवा की है और महर्षि दयानन्द के सिद्धान्तानुसार जीवन पर चलते हुए आर्यसमाज के गौरव को बढ़ाया है। ऐसे १०० विद्वानों का जीवन चरित्र, कार्य, उपदेश आदि को लिए हुए **आर्यसमाज के गौरव** नामक ऐतिहासिक ग्रन्थ होगा, जो आर्ट पेपर पर छपेगा। कृपया आप अपना एक रंगीन पासपोर्ट साइज फोटो,जन्म से आज तक का पूर्ण विवरण भेजने की कृपा करें। जिसमें संन्यासी, महोपदेशक, भजनोपदेशक, विदुषी महिलाएँ, राजनेता, शिक्षाविद्, लेखक, समाजसेवी, दानी एवं उद्योगपति आदि होंगे, जिनकी आयु ४० वर्ष से ऊपर हो। समिति के निर्णयानुसार प्रकाशन होगा। **सम्पर्क सूत्र**- ठाकुर विक्रमसिंह (अध्यक्ष), राष्ट्र निर्माण पार्टी, ए-४१, द्वितीय फ्लोर, लाजपत नगर-दो, निकट- मेट्रो स्टेशन, नई दिल्ली-११००२४, दूरभाष- ०११-४५७९११५२, ९५९९१०७२०७

६. वेद प्रचार- परोपकारिणी सभा, अजमेर के द्वारा महर्षि दयानन्द सरस्वती वैदिक विचार चैरिटेबल ट्रस्ट परतवाड़ा, जि. अमरावती, महाराष्ट्र में दि. २० सितम्बर से ४ अक्टूबर २०१७ तक वेद प्रचार कार्यक्रम रखा गया, जिसमें पं. भूपेन्द्रसिंह-अलीगढ़ एवं लेखराज शर्मा जुरहरा तथा आचार्य सत्यप्रिय-परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित जमानी आश्रम से पधारे। परतवाड़ा के विभिन्न मौहल्लों में, विद्यालयों में, परिवारों तथा मन्दिरों में कार्यक्रम रखा गया। भजन एवं उपदेश की सैकड़ों लोगों ने काफी प्रशंसा की। नशामुक्ति, पाखण्ड, छुआछूत, अन्धविश्वास आदि पर चर्चा की गई। प्रचार की व्यवस्था निम्न स्थानों पर पंकज कुमार शाह ने बनाई- आर्यसमाज पथ्रोट, गुरुद्वारा परतवाड़ा, वीर शिवाजी मण्डल, बदनापुर विद्यालय, ग्राम लाखनवाड़ी, सन्तोष नगर, अचलपुर, अकोलखेड, मुन्डगाँव, अमरावती एवं सारनी।

७. वधू चाहिये- आर्य परिवार, संस्कारित, जन्मतिथि- १७/१०/१९८८ वर्ष, कद- ५ फुट, ८ इंच., शिक्षा- बी. टेक (इलैक्ट्रोनिक), लिमिटेड कम्पनी में अच्छी पोस्ट युवक हेतु आर्यसमाजी परिवार की समकक्ष संस्कारित युवती चाहिए। **सम्पर्क- ९४११५०१३२२, मेल**-tapish194@gmail.com

शोक समाचार

८. गुरुकुल हरिपुर, जुनानी ओडिशा के कुलपति, वानप्रस्थी **सत्यनारायण आर्य**-कोलकाता, सुजानगढ़ पिछले तीन साल से अस्वस्थ चल रहे थे, उनका देहावसान ९२ वर्ष की आयु में ६ अक्टूबर २०१७ को रायपुर में हो गया। पिछले ३५ वर्षों से उन्होंने अपना सारा समय समाज-सेवा व जन-कल्याण के लिये अर्पित किया था। प्रत्येक क्षण उनका यही विचार रहता था कि मैं किस प्रकार किसी अनाथ, विधवा, गरीब, असहाय दिव्यांगों की सेवा कर सकूँ। ओडिशा, झारखण्ड, छत्तीसगढ़, राजस्थान, आसाम, आन्ध्रप्रदेश, मध्यप्रदेश आदि प्रदेशों में स्थित अनेक धार्मिक शिक्षण संस्थानों को वे अपने दान से सिंचित, पुष्पित व पल्लवित करते रहे, उनमें से गुरुकुल हरिपुर अग्रगण्य है। **परोपकारी परिवार की ओर से उन्हें हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।**